चन्दामामा
अगस्त १९९७
रु ६
प्रकाशन का पचासवाँ साल
50
चन्दामामा

चन्दामामा

अगस्त १९९७

एक प्रति : ६.००

वार्षिक चंदा : ७२.००

Rs. 30/-

Rs. 40/-

Rs. 30/-

Rs. 30/-

Rs. 25/-

Rs. 30/-

CHANDAMAMA BOOKS ARE ALREADY A LEGEND! THEY OPEN A NEW HORIZON ON THE WORLD OF LITERATURE FOR THE YOUNG

Added to the six titles by **Manoj Das** is the charming seventh–

WHEN THE TREES WALKED

by the inimitable story-teller **Ruskin Bond**
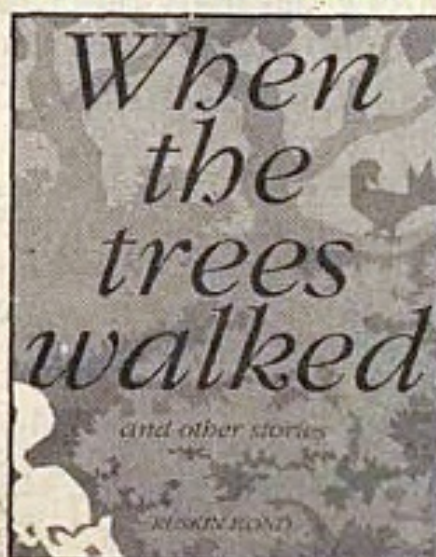
Rs. 30/-

Among the titles in the process of production are:

STORY OF KRISHNA
STORY OF RAMA
STORY OF BUDDHA

For details, write to:

CHANDAMAMA BOOKS
Chandamama Buildings
Vadapalani, Madras - 600 026.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : बी. नागिरेड्डी

स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती

भारत की स्वतंत्रता का पचासवाँ साल हम मना रहे हैं। इस स्वतंत्रता-प्राप्ति के पीछे वर्षों तक किया गया हमारा संघर्ष व त्याग सर्वविदित है।

कब से हमने विदेशी सत्ता के विरुद्ध अपनी अप्रसन्नता व्यक्त की ? कब से हमने उसका विरोध करना प्रारंभ किया ?

इसमें रत्ती भर भी संदेह नहीं कि उपनिवेशियों के विरुद्ध सुव्यवस्थित विद्रोह १८५७ में हुआ। उस युगारंभी उपाख्यान के ऐतिहासिक सत्य हम प्रकाशित करनेवाले हैं, जो धारावाहिक होगा।

भारत के राजाओं ने ईस्ट इंडिया कंपनी को बेचने और खरीदने की ही अनुमति दी थी। किन्तु कंपनी के अधिकारियों ने चालाकी से यहाँ के ज़मींदार बनने का प्रयत्न किया। तब से लेकर उनके विरुद्ध यत्र-तत्र विप्लव व विद्रोह होते रहे।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए किये गये हमारे संघर्ष के हर पहलू तथा तत्संबंधी सिद्धांतों पर हम अपने अगले अंकों में प्रकाश डालेंगे।

वर्ष : ४७ अगस्त १९९७ अंक : १०
एक प्रति : रु. ६/- वार्षिक चन्दा : रु ७२/-

चन्दामामा
चांदोबा
चन्दामामा
చందమామ
CHANDAMAMA
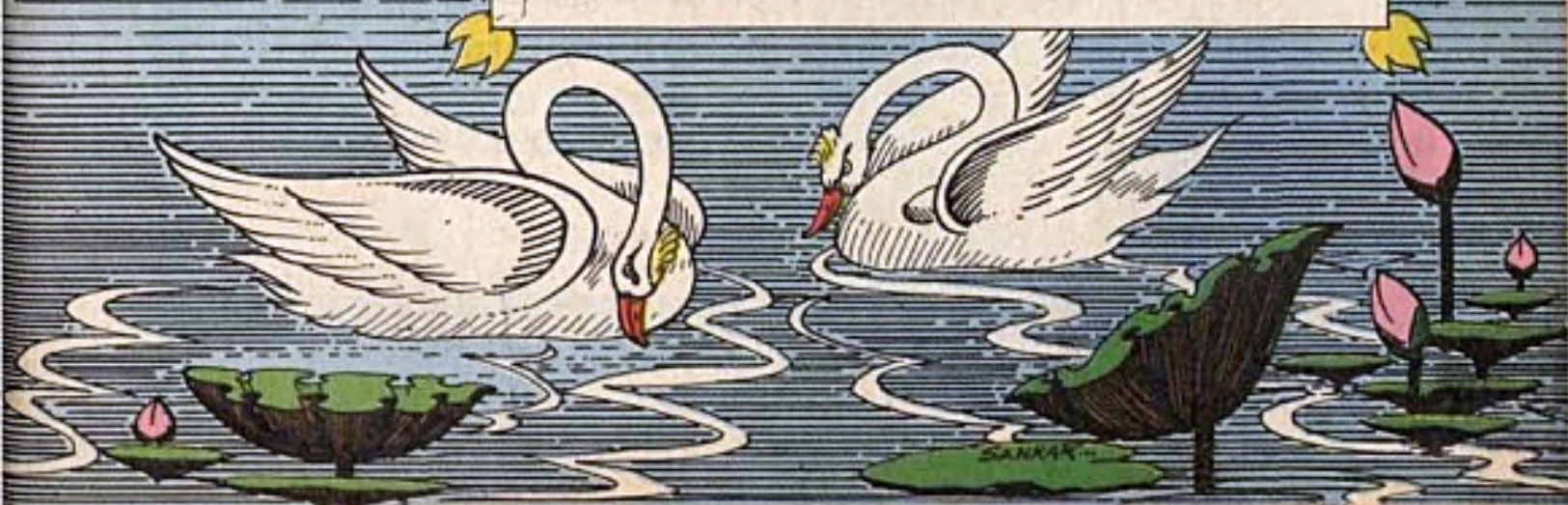
समाचार - विशेषताएँ
फ्रान्स में नयी सरकार

हमने अपने पिछले अंक में पढ़ा था कि ब्रिटेन की सरकार बदल गयी। लगता है कि परिवर्तन की हवा इंग्लीष चानल से होकर चल रही है। जून, पहली तारीख़ को फ्रान्स में आम चुनाव हुए। इससे उस देश की सरकार में भी तब्दीली आयी। इंग्लैंड में कन्सरवेटिव पार्टी के हार जाने से अठारह सालों के बाद लेबर पार्टी ने शासन-भार संभाला। फ्रान्स का कन्सरवेटिव भी दल बुरी तरह से हारा। तेरह सालों के बाद वामपक्षी दल सत्तारूढ़ हुए। सोशलिस्ट ग्रूप के नेता लयोनेल जास्पिन नये प्रधानमंत्री बने। निर्णीत समय के एक साल पहले ही फ्रान्स में चुनाव हुए। कन्सरवेटिव दल के जाक्वेस चिराक देश के अध्यक्ष हैं। एलेन जूस प्रधान मंत्री थे। ये भी कन्सरवेटिव पार्टी के ही थे। अध्यक्ष व प्रधानमंत्री का पूर्ण विश्वास था कि इस चुनाव में उनकी और अत्यधिक संख्या से जीत होगी, इसीलिए उन्होंने निर्धारित समय से एक साल पहले ही चुनाव लड़ने का निश्चय किया।

किन्तु उनका हिसाब ग़लत निकला। सब उलट-पुलट हो गया। संसद की कुल संख्या है ५७७। कन्सरवेटिव दल को २५६ स्थान मिले।

पिछले संसद में कम्यूनिस्टों की संख्या २४ मात्र थी। उसने अब ३८ स्थानों पर विजय पायी। सरकार बनाने के लिए आवश्यक बहुसंख्या नहीं थी, इसलिए सोशलिस्ट ग्रूप ने कम्यूनिस्टों की मदद माँगी। जास्पिन ने कम्यूनिस्टों को मंत्रिमंडल में शामिल होने के लिए निमंत्रण दिया, जिसे उन्होंने स्वीकार किया। चौदह सदस्यों के मंत्रिमंडल में दो कम्यूनिस्ट भी हैं।

फ्रांस के संविधान के अनुसार सरकार को चलाने के सारे अधिकार अध्यक्ष को ही हैं। वर्तमान अध्यक्ष कन्सरवेटिव दल के हैं और मंत्रिमंडल बनाया है कन्सरवेटिवस् के प्रतिद्वंदियों ने। प्रधान मंत्री जास्पिन ने आशा व्यक्त की'' देश-कल्याण को दृष्टि में रखते हुए पारस्परिक आदर की भावना को बनाये रखते हुए अध्यक्ष चिराक से मिल-जुलकर काम करेंगे।''

५९ सालों की उम्र के जास्पिन पहले विश्व विद्यालय में अध्यापक थे। कुछ समय तक उन्होंने देश के शिक्षा-मंत्री का कार्य भी संभाला। उन्होंने कन्सरवेटिव पार्टी के नीति-घोषणा-पत्र को केवल शुष्क वादों की गठरी कही। उन्होंने उन वादों की जमकर नुक़ताचीनी की। ''उन्होंने कहा ''फ्रान्स की प्रजा को झूठे वादे नहीं चाहिये, उन्हें चाहिये केवल सच्चाइयों की जानकारी।'' उनका मानना है कि सच तो यह है कि फ्रान्स अब तीव्र रूप से बेकारी की समस्या से पीडित है। इसलिए वे समझते हैं कि उनका प्रधान लक्ष्य यह बेकारी हटानी है; नयी-नयी नौकरियों के लिए मार्ग ढूँढ़ने होंगे। वे कुछ और तीव्र सुधार भी ले आना चाहते हैं। ''प्रजा बहुत कुछ चाहती है। लेकिन वह यह नहीं कहती कि सब कुछ एकसाथ होना चाहिये। भविष्य में प्रगति हो, इसके लिए वह न्याय-संगत माँगें माँग रही है।'' प्रधान मंत्री जास्पिन ने कहा।
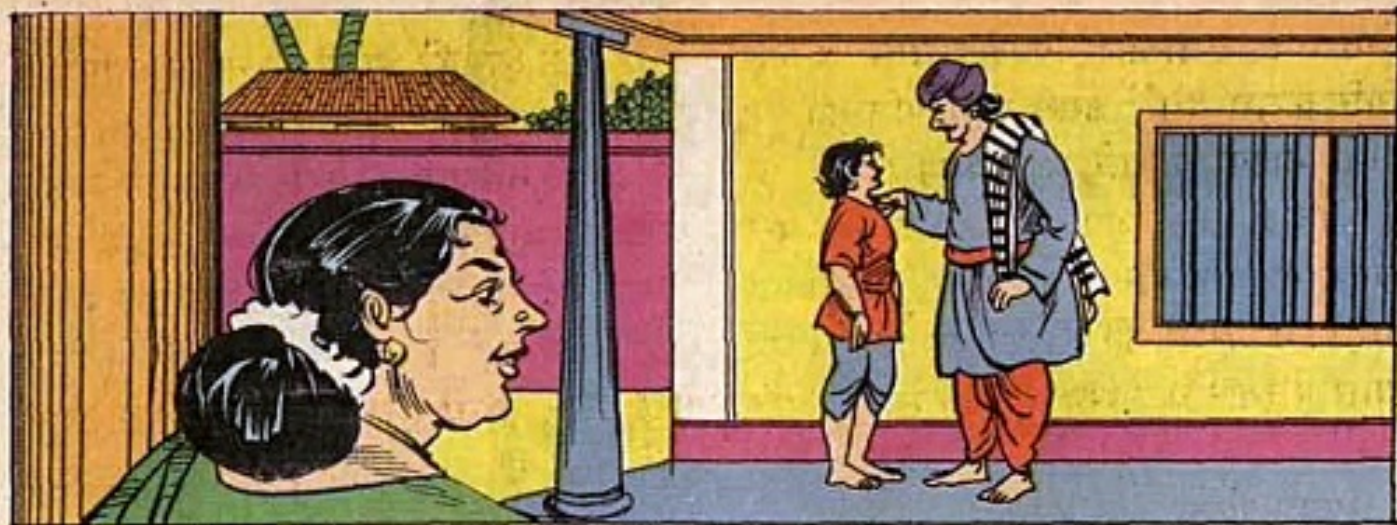
काम आयी बीमारी

चंदनवन में शतव्रती नामक प्रख्यात व उत्तम वैद्य रहता था। लोग उसे अपर धन्वंतरी मानते थे।

दशव्रती उसका इकलौता पुत्र था। माँ-बाप ने उसे बड़े ही लाड़-प्यार से पाला-पोसा। यद्यपि बड़ा ही अक़्लमंद था, पर अव्वल दर्जे का ज़िद्दी था। माँ-बाप ने सोचा कि उम्र बीतते-बीतते उसका यह दुर्गुण दूर हो जायेगा। परंतु उम्र के साथ-साथ यह दुर्गुण बढ़ता ही गया। पौधा ही जब नहीं झुकता तब वृक्ष बनकर भला क्योंकर झुकेगा।

ऐसे तो दशव्रती बुरी आदतों का शिकार नहीं था, परंतु वह वही करता, जो वह चाहता था। पिता ने ज़ोर दिया कि वैद्यशास्त्र सीखो, परंतु उसने न कह दिया। काव्य, पुराण और कविताएँ पढ़ने में उसकी अभिरुचि थी। स्वयं कविताएँ भी लिखता रहता था। दूसरों का मज़ाक उड़ाना, अपनी ग़लती को मानने से इनकार करना, बड़ों का अपमान करना आदि उसकी बुरी आदतें थीं।

पिता ने उससे बहुत बार कहा कि अपनी इस प्रवृत्ति को छोड़ो, पर वह टस से मस न हुआ। एक दिन पिता ने उससे कहा "जिसकी बुद्धि अच्छी होती है, उसका स्वास्थ्य भी अच्छा होता है। अगर तुम नहीं सुधरे तो मुझे भय है कि तुम व्यर्थ ही रोगों के शिकार हो जाओगे।"

दशव्रती ने अपने पिता की बातों की परवाह नहीं की। पर पिता के सावधान करने के महीने के अंदर ही उसे एक विचित्र बीमारी छू गयी। एक दिन सबेरे-सबेरे जब वह नींद से जागा तो उसने देखा कि उसके सारे शरीर पर सफ़ेद और लाल दाग़ निकल आये हैं। वह बहुत ही विकृत दिखायी दे रहा है। शतव्रती अपने बेटे की इस हालत को देखकर बहुत घबराया और दवा दी। उस दवा के प्रभाव के

अरुण भंसाल

कारण दशव्रती के हाथों और पाँवों पर जो दाग़ थे, मिट गये। किन्तु उसकी पीठ व पेट पर जो दाग़ थे, जैसे के तैसे रह गये। इन दाग़ों को छिपाने के लिए दशव्रती सदा कुरता पहनता था।

"दूसरों का आदर करो, उनकी इज़्ज़त करो, नाराज़ी छोड़ो, बड़ों के प्रति आदर-भाव रखो, अपनी कमियों को और जीभ को काबू में रखो, तभी तुम्हारी यह बीमारी दूर होगी।" शतव्रती ने अपने बेटे को समझाया।

दशव्रती को अपने पिता की बातों का विश्वास नहीं हुआ। वह संदेह करने लगा कि उसके पिता जान-बूझकर उसकी बीमारी की चिकित्सा नहीं कर रहे हैं। उसका शक था कि उसके पिता ने कोई दवा आहार में मिलायी होगी, जिसके फलस्वरूप उसे इस रोग का शिकार होना पडा। उसने अपना यह संदेह माता को बताया तो उसने अपने पति से अपने बेटे के मन की बात बतायी।

"पराये की भी चिकित्सा करता हूँ और उसकी बीमारी को दूर करता हूँ। मैंने आज तक कभी भी अपने दुश्मन को भी ऐसी दवा नहीं दी, जिससे वह रोगग्रस्त हो जाए।" अपने बेटे के स्वभाव पर चिंतित होते हुए शतव्रती ने अपना दुख प्रकट किया।

दशव्रती का संदेह दूर नहीं हुआ। वह अब भी अपने पिता पर शक करता ही रहा। कुछ दिनों बाद शतव्रती के पास एक रोगी आया। वह भी उसी बीमारी का शिकार है, जिस बीमारी का शिकार दशव्रत है। शतव्रती ने उसे दवा दी और कहा "अपने से बड़ों का आदर करो, तुमसे जो छोटे हैं, उनपर दया-

भाव रखो, क्रोध व चिड़चिड़ाहट को काबू में रखो। जल्दी ही तुम्हारी बीमारी दूर होगी।"

सप्ताह के अंदर ही उस रोगी का रोग दूर हो गया। वह अब बिल्कुल स्वस्थ है।

यह विषय जानते ही दशव्रती सीधे पिता के पास गया और क्रोध-भरे स्वर में पूछा "यह रोगी हफ़्ते भर में चंगा हो गया। जान-बूझकर आपने मुझे सही दवा नहीं दी। जो दवा आपने उसे दी, वही मुझे भी दीजिये। अगर आपने ऐसा नहीं किया तो मैं ऐसा समझने बाध्य हो जाऊँगा कि आप मुझे चाहते ही नहीं।" शतव्रती ने हँसते हुए कहा "मैंने तुम दोनों को एक ही दवा दी। मैं समझाऊँ भी तो समझने से तुम इनकार कर रहे हो। अब एक ही उपाय रह गया। वैद्यशास्त्र का अध्ययन करोगे तो तुम स्वयं इस सत्य को जान जाओगे।"

''वैद्यशास्त्र में मुझे कोई अभिरुचि नहीं। बताइये कि किस पुस्तक को पढ़ने पर मेरी बीमारी की दवा का पता लग सकता है? उसे पढ़ूँगा और चिकित्सा-पद्धति जान लूँगा।'' दशव्रती ने आवेश में आकर कहा।

''वैद्यशास्त्र में मनुष्य-शरीर के तत्वों से संबंधित विवरण होते हैं। बीमारियाँ क्यों होती हैं, कारण भी बताये गये हैं। हम जिन आहार-पदार्थों का उपयोग करते हैं, बीमारियों को दूर करने के लिए जिन विविध जड़ी-बूटियों को हम इस्तेमाल में लाते हैं, तत्संबंधी विवरण इन शास्त्र-ग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं। वैद्य अच्छी तरह से अध्ययन व मनन करने के बाद बीमारियों के लिए दवाएँ तैयार करता है। वैद्यशास्त्र यह नहीं कहता कि फ़लाने रोग के लिए फ़लानी दवा का ही उपयोग होना चाहिये। यह निर्णय तो वैद्य ही कर सकता है। वैद्यशास्त्र पढ़ने पर ही कोई वैद्य बनने का हक़दार होता है।'' शतव्रती ने कहा।

पिता की इन बातों को सुनकर दशव्रती ने ठान लिया कि वैद्यशास्त्र सीखकर ही रहूँगा। उसकी प्रबल इच्छा थी कि यह साबित कर दूँ कि पिता ने जान-बूझकर ही उसे ग़लत दवा दी। उसने ठान लिया कि वैद्यशास्त्र का अध्ययन करूँगा और अपनी बीमारी दूर करने के लिए सही दवा ढूँढ निकाल लूँगा। उस दिन से वह अध्ययन में जी-जान से लग गया। शतव्रती ने उससे कहा ''स्वयं ही अध्ययन-कार्य में लग जाओगे तो सीखने में विलंब होगा; तुम्हारा ज्ञान सीमित होगा; विषय की गहराई में नहीं जा पाओगे। कोई भी विद्या गुरु से ही सीखनी चाहिये। यह सत्य जानो कि पिता से बढ़कर कोई गुरु नहीं होता।''

शीघ्र ही वैद्यशास्त्र में पारंगत होने के उद्देश्य से दशव्रत ने पिता की यह सलाह मान ली। वह तो अक़्लमंद था ही, तिसपर अपर धन्वंतरी पिता से प्राप्त शिक्षा। एक साल के अंदर ही वह वैद्यशास्त्र संबंधी मुख्य विशेषताओं को सीख गया।

तब जाकर पिता की कही बातों की कुछ सच्चाइयों को जीर्ण कर पाया। संतोष, शांति - ये दोनों मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य के लिए मुख्य हैं। घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, असंतोष, क्रोध मनुष्य के स्वास्थ्य को बिगाड़ते हैं। इन सत्यों को जानने के बाद भी उसमें संदेह बना रहा कि पिता ने उसकी बीमारी को दूर करने के लिए सही दवा नहीं दी।

दशव्रती को मालूम हो गया कि उसकी

बीमारी की दवा क्या है? उसे तैयार करनी हो तो दो जड़ी-बूटियों की आवश्यकता है। शतव्रती ने जब कहा कि ये जड़ी-बूटियाँ उसके पास नहीं हैं, तो उन्हें लाने वह जंगल निकला।

वह जंगल में घूमता रहा। आख़िर उसे आवश्यक जड़ी-बूटियाँ दिखायी पडीं। जब वह उन्हें इकट्ठा कर रहा था तब एक बाण तेज़ी से आकर ज़मीन में पास ही गड गया। बाण के वेग की वजह से उसके दायें हाथ की हथेली थोड़ी छिल गयी।

दशव्रती ने क्रोधित हो कहा "यह किस दुष्ट का काम है? गर्व में चूर है क्या? मुझपर बाण चलाने की क्या आवश्यकता है?" कहता हुआ पीछे मुड़ा।

तब उसने देखा कि उस देश का राजा वहाँ खड़ा है। वह शिकार करने आया था। किसी जंतु को मारने बाण चलाया तो निशाना चूक गया। राजा ने उसे देखते हुए हँसकर कहा "जान-बूझकर मैंने तुमपर बाण नहीं चलाया। तुमने भी जान-बूझकर मेरी निंदा नहीं की। मैं मानता हूँ कि मेरे बाण से तुम्हें हानि पहुँची और यह मेरी ग़लती है। तुम भी मानो कि अनजाने में तुमने इस देश के राजा को गाली दी।" दशव्रती ने कहा "तुमने मान लिया कि बाण चलाकर तुमने ग़लती की। बाण मुझपर आ गिरा, इसके लिए मैंने तुम्हें गाली दी। मैं नहीं समझता कि मुझसे कोई भूल हुई।"

"मैं इस देश का राजा हूँ। अपने देश के राजा का आदर करना पहले सीखो। फिर गिन लेंगे कि किस-किस से क्या-क्या भूल हो गयी।" राजा ने कहा।

और अशांत होते हुए दशव्रती ने कहा "साधारण व्यक्ति से भूल होती है तो उससे केवल उसी को नष्ट पहुँचता है। किन्तु राजा से भूल हो जाए तो पूरे देश को नष्ट पहुँचता

है। भूल करनेवाला राजा आदर के योग्य नहीं है। मैं अपनी भूल मानने तैयार नहीं हूँ।''

उसकी बातें सुनकर राजा के क्रोध का पारा चढ़ गया। उसने ताली बजायी तो दस सैनिक दौड़े-दौड़े आये। उसने उनसे कहा ''अपनी ग़लती मान लेनेवाले की भी निंदा करनेवाला यह अपराधी है। अपने राजा का भी आदर न करनेवाला वाचाल है यह। इसे सौ कोड़े लगाओ।''

बस, दो सैनिकों ने दशव्रती के दोनों हाथों को मरोडकर पकड़ लिया और एक सैनिक ने कोड़ा लगाने हाथ उठाया।

अब दशव्रती ने परिस्थिति भाँप ली। वह काँपता हुआ बोला ''महाप्रभू, मैं प्रमुख वैद्य शतव्रती का पुत्र हूँ। अनारोग्य से पीडित हूँ। जड़ी-बूटियों के लिए यहाँ आया हूँ। अनारोग्य की ही वजह से चिड़चिड़ाहट और क्रोध अधिक हो गये। अपने को काबू में रख नहीं सका। जो मुँह में आया, बक गया। मुझे क्षमा कीजिये।''

राजा ने कहा ''कोड़ा देखते ही तुममें तब्दीली आयी। कोड़े की चोट बदन पर पड़ी तो वह तब्दीली हमेशा के लिए रह जायेगी। तुम्हें कोड़े की मारें खानी ही होंगीं।''

सैनिक ने कोड़े से मारने के लिए दशव्रती का कुरता उतारा। उसका बदन और बदन पर दाग़ देखते ही सैनिक सहित राजा भी चौंक उठा। ''इसके बीमार होने की बात सच है। इसे छोड़ दो।'' राजा ने आज्ञा दी।

बच जाने की ख़ुशी में जड़ी-बूटियाँ लेकर दशव्रती घर लौट आया। अपने पिता को घटी घटना के विवरण दिये और कहा ''आपने मुझे समझाने की बहुत कोशिश की। किन्तु मैंने समझने से इनकार किया। आपने कहा भी कि अपनी जीभ पर काबू रख, नहीं तो अनर्थ होगा, तुम्हारा अशुभ होगा। पर मैंने आपकी बातों की लापरवाही की। आपने कहा भी कि यह एक बीमारी है, जिससे दूर रहो। अगर मेरे चर्म पर ये दाग़ नहीं होते तो आज मैं मर गया होता।''

''अच्छा हुआ, यह बीमारी तुम्हारे काम आयी। इस बीमारी से तुम्हारा भला ही हुआ। अब तुमने जान लिया कि क्रोध, वाचालता, बकवास, आदि ख़तरनाक बीमारियाँ हैं। अब आगे तुम्हें इस बीमारी से कुछ लेना-देना नहीं है।'' शतव्रती ने बेटे की चिकित्सा की और दस ही दिनों में उसे उस बीमारी से मुक्त कर दिया।

सानंद

उर्मिला, सुशीला व श्याम की इकलौती बेटी है। इस कारण उन्होंने उसे बड़े ही लाड़-प्यार से पाला-पोसा। उर्मिला भी अपनी माँ को छोड़कर क्षण भर भी रह नहीं पाती है। वह जब बड़ी हुई, तब उसके माता-पिता उसकी शादी की कोशिशों में जी-जान से लग गये। सुशीला चाहती है कि घर-जँवाई चुना जाए। श्याम की भी यही इच्छा है। ऐसे तो बहुत-से रिश्ते आये, किन्तु कोई भी घर-जँवाई बनकर ससुराल आने के लिए तैयार नहीं।

आख़िर सुशीला, श्याम को अपनी जिद छोड़नी ही पडी। वे चाहते नहीं थे, फिर भी उन्हें निर्णय लेना ही पडा कि शादी के बाद बेटी ससुराल भेजी जाए। पड़ोस के गाँव के रामबाबू नामक युवक ने सुशीला को देखा और उससे शादी करने पर सहमत हुआ। दोनों पक्षों के बड़ो ने आपस में बात कर ली और शादी तय हुई। शादी बड़े पैमाने पर संपन्न हुई। उर्मिला ससुराल गयी।

चूँकि मायके में बड़े ही लाड़-प्यार से पली, इसलिए ससुराल में रहना उससे संभव नहीं हो पाया। उसने पंद्रह दिनों के अंदर ही सास से साफ़-साफ़ कह दिया कि मैं मायके चली जाऊँगी। अलावा इसके, उसने अपने पति से भी कहा कि तुम मेरे साथ आ जाओ और वहीं रहो। रामबाबू ने घर-जँवाई बनकर आने से इनकार किया।

उर्मिला अकेली ही मायका लौट आयी। सुशीला और श्याम बेटी को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। बेटी के ससुराल चले जाने के बाद दोनों बहुत चिंतित थे। मायका आ जाने के बाद एक ही हफ़्ते में उर्मिला को पति की याद सताने लगी। उससे रहा नहीं गया। माँ ने उसे बहुत समझाया, पर इस बात पर अड़ी रही कि मुझे किसी भी हालत में अपने पति के पास जाना ही होगा। सुशीला को अपनी बेटी के रवैय्ये पर बड़ा अचरज हुआ। वह पहले तो उसे छोड़कर रह

रमणी राकेश

नहीं पाती थी, पर अब ससुराल जाने पर तुली हुई है और जिद कर रही है कि ससुराल में ही रहूँगी।

एक दिन सबेरे उर्मिला ससुराल जाने निकल पड़ी। रामबाबू भी अकेलापन महसूस करने लगा। उर्मिला के बिना उससे भी रहा नहीं गया। उर्मिला की याद सताने लगी। उसके माँ-बाप बारंबार उससे कहते रहे कि ससुराल चले जाओगे तो जग-हँसाई होगी; अपने और परायों की दृष्टि में भी तुम्हारा मूल्य घट जायेगा; तुम्हारा मज़ाक उड़ाया जायेगा। फिर भी उसने उनके हित-बोध की परवाह नहीं की। रामबाबू के पिता ने उसे सावधान करते हुए फिर से कहा "हमारी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जायेगी। गाँव के बड़े किसान के बेटे हो। अपना घर-बार छोड़कर, अपना ओहदा भुलाकर घर-जँवाई बनकर चले ज़ाओगे?"

"चला जाऊँगा तो क्या हो जायेगा? क्या आसमान धरती पर गिर जायेगा?" रामबाबू नाराज़ी से कहता हुआ निकल पड़ा। रामबाबू और उर्मिला दोनों रास्ते में एक-दूसरे से मिले। एक-दूसरे को देखकर आश्चर्य में डूब गये। कुछ क्षणों तक दोनों के मुँह से बात भी नहीं निकली।

उर्मिला ने पहले अपने को संभाल लिया और कहा "आपके घर आकर मैं रह नहीं सकूँगी। हमारे घर में आकर रहना आपको अच्छा नहीं लगता। आप ही कहिये कि इस स्थिति में हम क्या करें?"

रामबाबू ने थोड़ी देर तक सोचने के बाद कहा "समस्या का हल आसान है। न ही तुम्हारे घर में रहेंगे, न ही हमारे घर में। अपने घर में रहेंगे। चलो, दोनों चलते हैं और अपना परिवार अलग बसा लेते हैं। कभी-कभी तुम्हारा घर और हमारा घर जाते रहेंगे और अपने-अपने माँ-बाप को देखकर लौटेंगे। बिना किसी मनमुटाव के सब सानंद रहेंगे।"

उर्मिला ने खुशी से अपना सिर हिलाया। जो हुआ, सुनने के बाद रामबाबू के पिता ने बहुत ही खुश होते हुए अपनी पत्नी से कहा "देखा, बेटे ने मेरी ही बात मानी। घर-जँवाई बनकर ससुराल नहीं गया। कुछ भी हो, आख़िर वह बेटा किसका है?"

"देखा, बेटी ससुराल नहीं गयी। दामाद को अपने मार्ग पर ले आयी। अपनी तरफ़ झुका लिया। आख़िर वह बेटी किसकी है?" सुशीला ने बड़े ही आनंद से कहा।
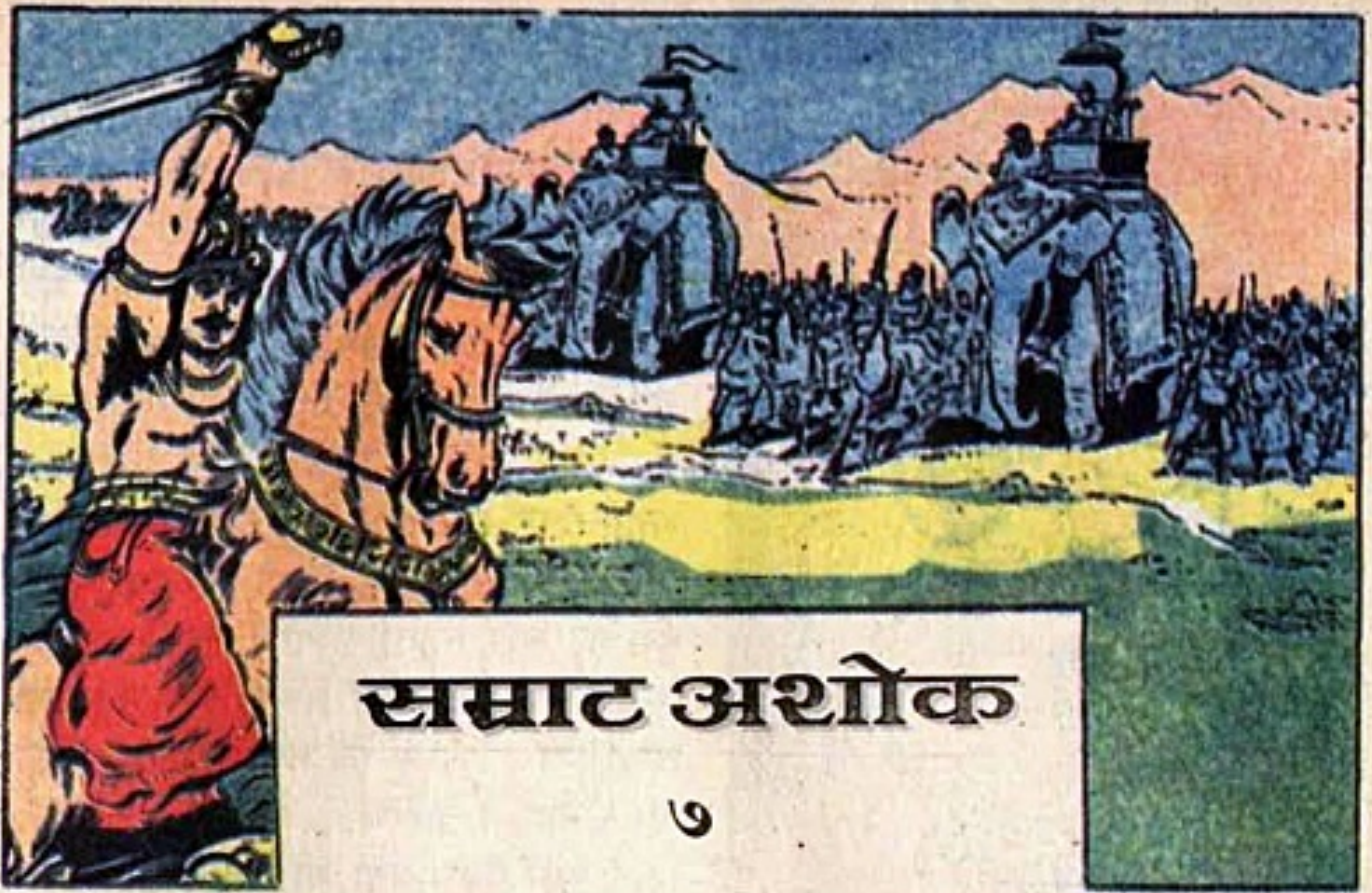
सम्राट अशोक

७

(तक्षशिला में छिड़े विद्रोह को कुचल डालने के बाद विजेता अशोक स्वदेश लौट रहा था। सुशेम ने उसकी हत्या कराने की योजना बनायी, किन्तु वह विफल हुई। ज्येष्ठ पुत्र की कुटिल-बुद्धि पर राजा बिंदुसार के हृदय को तीव्र धक्का पहुंचा। राजा ने निर्णय किया कि दोनों राजकुमारों में से एक राज-प्रतिनिधि के रूप में उज्ञयिनी भेजा जाए। राजधानी पाटलीपुत्र को छोड़कर उज्ञयिनी जाने के लिए सुशेम तैयार नहीं था। राजा ने अशोक को भेजने का निर्णय लिया। उसे संपूर्ण विश्वास था कि अशोक उसकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करेगा।) -बाद

अशोक ने आकर पिता बिंदुसार को सविनय प्रणाम किया। संकेत द्वारा राजा ने अशोक को आसन पर बैठने को कहा। स्वयं शय्या में उठकर बैठ गया और कहा "पुत्र अशोक, इसकी मुझे बड़ी खुशी है कि तुम विजयी होकर लौटे। प्राण संकट में डालकर तुमने विद्रोहियों को कुचल डाला। तुम्हें मार डालने का जो षड़यंत्र रचा गया, उससे बाल-बाल बच गये। तुम जानते ही हो कि शासन-पद्धति अस्त-व्यस्त है। इसे सुधारना, संवारना, सक्रम मार्ग में रखना नितांत आवश्यक है। विजय और सुधार ये दोनों राजकुमारों के लिए दो आँखों के समान हैं। एक में तुमने अपना सामर्थ्य दिखाया। साबित किया कि तुम सच्चे मानों मे योद्धा हो। द्वितीय विषय में भी मैं तुम्हारे सामर्थ्य की परीक्षा लेना चाहता हूँ।"

अशोक ने सविनय कहा, "मुझे क्या

करना चाहिये, आज्ञा दीजिये ।''

''सुसंपन्न अवंती की राजधानी उज्ञयिनी हमारे लिए सब प्रकार से तक्षशिला से अधिक प्रधान है। वहाँ का हमारा प्रतिनिधि अकस्मात् मर गया । क्या तुम स्वयं वहाँ जाकर शासन की बागडोर संभालने के लिए सन्नद्ध हो ?''

''पिताश्री की आज्ञा का पालन करना अपना महाभाग्य मानता हूँ।'' अशोक ने निस्संकोच कहा ।

''बहुत प्रसन्न हुआ । कृष्णानदी के तट पर स्थित इस सुँदर नगर में हमारे बहुत-से प्रतिनिधि मौजूद हैं। तुम चाहते हो तो चंद विश्वासपात्र व्यक्तियों को अपने साथ ले जा सकते हो। शीघ्र ही उज्ञयिनी जाने की तैयारी करो।'' राजा बिंदुसार ने कहा।

''जैसी आज्ञा'' कहकर अशोक ने पिता को नमस्कार किया । वहाँ से वह सीधे माँ के पास गया। पिता की आज्ञा का समाचार सुनाया और माँ के पैरों पर गिरकर आशीर्वाद माँगा । यह बात सुनकर माँ सुभद्रा चौंक उठी। उसने कहा ''तुम्हें देखते हुए मैं शोक भूल जाती थी, इसीलिए तुम्हारा नाम रखा अशोक। तुम्हें देखे बिना मैं कैसे जीवित रह सकूँगी । जब तक तुम सक्षेम नहीं लौटोगे तब तक मैं शोकग्रस्त रहूँगी । दुख का भार सहती रहूँगी। एक प्रकार से तुम्हारा दूर जाना ही अच्छा है । सकुशल लौटो पुत्र '' आँसू-भरे नेत्रों से उसे उठाते हुए सुभद्रा ने कहा ।

''व्यर्थ दुखी होना भी अच्छा नहीं है। माँ, आपने कहा था कि मेरा दूर जाना एक प्रकार से अच्छा ही है। ऐसा क्यों ?'' पूछते हुए अशोक माँ की बगल में बैठ गया ।

''मेरी आशा है कि उज्ञयिनी में रहकर ही यहाँ से अधिक सकुशल रह सकोगे । यहाँ तुम्हारे विरुद्ध षड्यंत्र रचे जा रहे हैं। यहाँ तुम्हारे भयंकर शत्रु हैं। पता नहीं, मैं यह क्यों भूल जाती हुँ कि वे शत्रु उज्ञयिनी में भी क्यों नहीं आ सकते? पगली जो ठहरी । अपनी रक्षा के बारे में सदा सतर्क रहना। तुम्हारी माँ के आशीर्वाद हमेशा तेरे साथ हैं'' सुभद्रा ने दोनों हाथ उठाकर उसे आशीर्वाद दिया ।

अशोक ने जान-बूझकर अपनी हत्या के षडयंत्र के विषय को माँ से छिपाया । उसे भय था कि माँ इस विषय को जान जायेगी तो और घबरा जायेगी । उसे इस बात का

दुख भी नहीं था कि उसके पिता और मंत्री ने षड़यंत्रकारी सुशेम पर कोई कार्रवाई नहीं की। क्योंकि वह जानता था कि यह रहस्य खुल जाए तो राजवंश अपमानित होगा। उसपर कीचड़ उछाला जायेगा। विद्रोही शक्तियाँ इस अवसर का लाभ उठायेंगी और देश को विच्छिन्न करने के प्रयत्नों में लग जाएँगी। जो कभी भी किसी भी हालत में होना नहीं चाहिए। देश-कल्याण सर्वोपरि है।

उसे इस बात पर भी राजा से शिकायत नहीं थी कि वह उज्ञयिनी भेजा जा रहा है, जब कि सुशेम ने वहाँ जाने से अस्वीकार कर दिया। पिता की आज्ञा मानना उसने अपना प्रयत्न कर्तव्य माना-जाना।

एक दिन उषोदय की शुभ घड़ियों में सौ अंगरक्षकों को लेकर अशोक उज्ञयिनी निकला।

उस दिन मध्याह्न होते-होते सुंदर विदिशा घाटी के एक गाँव में पहुँचा। वह गाँव छोटे-छोटे पहाड़ों से घिरा हुआ था। गाँव में बहुत से मंदिर और एक बौद्ध विहार दिखायी पड़ा। उस गाँव में शाक्य वंश में जन्मे गौतम बुद्ध के वंश के कुछ संपन्न परिवार निवास करते थे।

विदिशा घाटी के शाक्य नायक ने अशोक का स्वागत किया। अपने ही घर अतिथि-सत्कार के लिए आवश्यक प्रबंध किये। किन्तु अशोक ने गाँव के ही बाहर रहने का निश्चय किया। उसकी आज्ञा के अनुसार समतलवाले एक पहाड़ पर विश्रांति लेने के लिए एक पड़ाव डाला गया। रात को भोजन

करने के बाद अशोक आराम से सो गया।

अरुणोदय के समय उसकी नींद खुली। पड़ाव से बाहर आया। चारों ओर कोहरा छाया हुआ था। उस प्रशांत मनोहर वातावरण में कुछ दूर पैदल जाने की उसकी इच्छा हुई। अंगरक्षकों को साथ आने से मना किया और प्रकृति के सौंदर्य का मजा लूटते हुए धीरे-धीरे जाने लगा। तभी निद्रा से जगे पक्षियों का मधुर कलरव उसके मन को और आह्लादित कर रहा था। पहाड़ों और घाटियों में शांति छायी हुई थी। तभी पूरब में सूर्योदय हो रहा था। सूर्य की सुवर्ण किरणें नीले रंग के कोहरे को चीरती हुई आकाश में विचित्र शोभा उत्पन्न कर रही थीं। ठंडी हवा में खड़े होकर उस अद्भुत दृश्य को तन्मय होकर निहारने लगा अशोक। वह

एक क़दम बढ़ाने ही वाला था कि ध्वनि सुनायी पड़ी "ठहरिये, वहीं ठहर जाइये।"

अशोक यह जानने मुड़ा कि वह मधुर कंठध्वनि किसकी है? थोड़ी ही दूरी पर एक सुँदर युवती दिखायी पड़ी। श्वेत कोहरे के पर्दों के पीछे से तभी आकाश से भूमि पर उतरी देवी समान लगी वह युवती, अशोक को।

"आपको रोका, क्षमा कीजिये। आपके बिल्कुल सामने बहुत बड़ा अगाध है।" उस युवती ने कहा।

तब तक कोहरा घट गया और दिशाओं में प्रकाश फैल गया। आशोक ने बायीं ओर घूमकर नीचे देखा। वह भयंकर अगाध था। अशोक ने देखा कि वह एकदम अगाध के छोर पर खड़ा है। एक पग भी आगे बढ़ाता तो उसकी मृत्यु निश्चित थी।

अशोक मुड़कर उस युवती के निकट आया। उस युवती ने सिर झुकाकर कहा, "आपको बाधा पहुँचायी, क्षमा कीजिये युवराज।"

"तुम्हें क्षमा करूँ? अगर तुम न होते तो मेरे प्राण-पखेरू कबके उड़ गये होते।" अशोक ने कहा।

"मैंने आपकी रक्षा नहीं की। शाक्य मुनि बुद्ध की करुणा ने आपकी रक्षा की।" उस युवती ने कहा।

"तुम कौन हो? इस समय यहाँ क्यों आयी?" अशोक ने पूछा।

"इस प्रदेश का नाम ही है मेरा नाम भी। मुझे विदीशा कहकर पुकारते हैं। यहाँ के शाक्यनायक मेरे पिता हैं। एक गुफ़ा में बसे

वृद्ध बौद्ध भिक्षु की परिचर्याएँ करके लौट रही हूँ।" युवती ने कहा।

विदीशा की बात करने की पद्धति तथा उसकी सुँदरता ने अशोक को बहुत आकर्षित किया। उसका प्रशांत बदन उसे मनोमुग्ध-कारी लगा।

"युवरानी विदीशा, मेरी समझ में नहीं आता कि तुम्हें कैसे अपनी कृतज्ञता जताऊँ।" अशोक ने भाव-विभोर हो कहा।

"मैं युवरानी नहीं हूँ युवराज" विदीशा ने कहा।

"युवरानी से भी तुम बढ़कर हो। मेरी रक्षा करनेवाली देवी हो।" अशोक ने कहा।

"युवराज, एक विषय की ओर आपका ध्यान आकृष्ट करना मेरा कर्तव्य है। मैंने

आपके प्राणों की रक्षा नहीं की। शाक्यमुनि बुद्धदेव के भक्त की परिचर्याएँ करके लौट रही थी। इसका यह अर्थ हुआ कि उस बुद्ध की परम करुणा ने ही आपकी रक्षा की।'' कहकर विदीशा वहाँ से चली गयी।

अशोक की दृष्टि पुनः प्रकृति पर केंद्रित हुई। कितना विशाल विश्व। इस विश्व में कितनी विविध मधुरिमाएँ। कितनी करुणा। जिस राजभवन में उसने इतने साल गुज़ारे, वहाँ ईर्ष्या, द्वेष, प्रतिशोध, महत्वाकांक्षा, प्रति- स्पर्धा आदि के सिवा और हैं ही क्या? वह थोड़ी देर तक सोच में पड़ गया और फिर चलते हुए पड़ाव में पहुँचा। उस दिन वहीं ठहरकर विश्राम लेने तथा दूसरे दिन उज्ञयिनी निकलने का निश्चय किया। अंगरक्षकों को यह विषय बताने के बाद उनसे कहा ''कल ही हम यहाँ से निकलेंगे। याद रखना, मेरे एकांत का भंग न हो। इस गाँव की प्रजा को किसी प्रकार का कष्ट न पहुँचे। पूरा दिन अपने इच्छानुसार बिताओ।''

उसके बाद अशोक ने क्षिप्रा नदी में स्नान किया। पहाड़ों पर, घाटियों में इच्छानुसार भ्रमण किया।

अंगरक्षक पूरा दिन अशोक से दूर ही रहे। गाँव की सरहद पर वे तीन नर्तकियों से मिले। नर्तकियों के साथ कुछ वाद्यकार थे। सुंदर उन नर्तकियों ने नवरसों का आस्वादन चखाते हुए उन सैनिकों का दिल बहलाया। नाच-गान समाप्त होने के बाद सैनिकों ने उन नर्तकियों को अपने साथ खाने के लिए बुलाया। यह सुनते ही बहुत खुश होती हुई उन नर्तकियों ने कहा ''इससे बढ़कर हमें और क्या चाहिये। अवश्य आयेंगीं। आप अनुमति दें तो रसोई बनाने में भी आपकी सहायता करेंगीं।''

सैनिकों ने 'हाँ' कह दिया।

उस दिन शाम को शाक्य नायक अशोक से मिलने आया और रात को अपने यहाँ भोजन करने के लिए निमंत्रण दिया। अशोक एक क्षण भर के लिए सोच में पड़ गया। प्रधान मंत्री व सेनाध्यक्ष की चेतावनी उसके स्मृति-पटल पर चमक उठी। उन्होंने ज़ोर देकर कहा था कि किसी भी परिस्थिति में अपरिचित लोगों के यहाँ भोजन मत करो। यद्यपि शाक्य नायक हाल ही में परिचित हुआ, फिर भी उसे लगा कि वह विश्वसनीय व्यक्ति है। अलावा इसके, वह निमंत्रण

स्वीकार करके उसके घर जाए तो वहाँ उसकी पुत्री विदीशा को देखने की भी संभावना है। अतः अशोक ने शाक्य नायक के आह्वान को स्वीकार किया।

उस दिन रात को अशोक को सर्वश्रेष्ठ और अति रुचिकर भोजन खिलाया गया। सब पदार्थ विदीशा और उसकी माँ ने अपने ही हाथों बनाये। दीपों की कांति में विदीशा के प्रशांत वदन को देखकर अशोक का हृदय उत्साह से उमड़ पड़ा।

भोजन के समाप्त होते-होते आकाश मेघों से आच्छादित हो गया। शाक्य नायक और उसके मित्र स्वयं अपने हाथों में मशालें लेकर अशोक को पड़ाव तक ले गये।

पड़ाव पहुँचने के थोड़ी देर बाद फूलों की बारिश की तरह बूँदा-बाँदी होने लगी। अशोक शय्या पर लेटकर सोने का उपक्रम करने लगा। आधी रात को जब आशोक गाढ़ी निद्रा में था तब किकियाते स्वर में बड़ी चिल्लाहट सुनायी पड़ी। वह चौंक कर उठा। पड़ाव में उसने दो काले आकारवालों को देखा। एक आकारवान ने चमकती तलवार ऊपर उठायी।

बस, अशोक गेंद की तरह उछला और शय्या के नीचे पड़ी तलवार हाथ में ली और उस आकारवान पर टूट पड़ने ही वाला था कि वे दोनों वहाँ से भाग गये।

अशोक ने अंगरक्षकों को बुलाया, पर उनकी प्रतीक्षा किये बिना अकेले ही उनका पीछा करने लगा। उसने देखा कि इसके पहले ही कोई व्यक्ति उनका पीछा कर रहा है। अशोक ने एक व्यक्ति को पकड़कर नीचे

गिराया और दूसरे को पकड़ने ही वाला था कि उस व्यक्ति ने दूसरे को पकड़ लिया। बंदी दोनों स्त्रीयाँ ही थीं।

इतने में अंगरक्षक वहाँ दौड़े-दौड़े आये। आकाश में मेघ छंट गये और खिली चाँदनी व्याप्त थी। दोनों स्त्रीयों को देखकर सैनिक चकित रह गये। दिन भर अपने नाच-गानों से उनका मनोरंजन करनेवाली स्त्रीयाँ ही ये थीं। तब उस आधी रात के समय किकियाते स्वर में चिल्लाकर किसने अशोक को जगाया? उससे भी आगे बढ़कर दूसरे दोषी को पकड़नेवाले उस व्यक्ति को अशोक ने ध्यान से देखा। वह और कोई नहीं, विदीशा ही थी। अशोक के मुख पर फैले आश्चर्य को भाँपती हुई विदीशा ने कहा, "दिन भर आपके सैनिक नर्तकियों के नाच-गान में

तन्मय हो गये थे। इन नर्तकियों को देखते ही मुझे संदेह हुआ। वे मुझे केवल नर्तकियाँ नहीं लगीं। उनकी होशियारी व क़दम-क़दम पर बरती उनकी जागरूकता ने मेरे संदेह को और बढ़ाया। मैं बृद्ध भिक्षु की परिचर्या करके जब लौट रही थी तब मैंने देखा कि ये दोनों आपके कुछ अनुचरों के साथ पहाड़ी पड़ाव पर जा रही थीं। तभी उन्हें मैं रोकती तो शायद मुझे मार भी देतीं। भाग्यवश मेरा भाई यश मुझे वहाँ दिखायी पड़ा। उसे पहाड़ के नीचे सावधान रहने के लिए कहा और मैं छिपी-छिपी इनके पीछे-पीछे जाती रही। उन दोनों में से एक स्त्री ने पड़ाव के बाहर ही तलवार निकाली। मैंने सोचा, अब और विलंब करना नहीं चाहिये। बस, ज़ोर से चिल्ला पड़ी।''

''तो दूसरी बार भी विदीशा ने ही मेरे प्राणों की रक्षा की।'' अशोक ने कहा।

''मेरी विनती है कि नहीं, बुद्ध की अपार करुणा ने ही आपकी रक्षा की।'' अशोक ने मौन होकर सिर हिलाया। फिर उन स्त्रीयों को ग़ौर से देखा, जो उसे मारने आयी थीं। फिर वह पड़ाव की तरह चल पड़ा। उन स्त्रीयों के साथ आये पुरुषों की खोज में लग गये अंगरक्षक। कोई भी दिखायी नहीं पड़ा। पहाड़ के नीचे प्रतीक्षा में बैठे विदीशा के भाई को झाड़ियों के पीछे छिपा एक आदमी मिला। यश को देखते ही वह नदी में कूदने के लिए दौड़ने लगा, पर यश ने नदी में कूदने के पहले ही उसे पकड़ लिया।

पकड़े गये आदमी व उन दोनों स्त्रीयों के हाथों को मरोड़कर अंगरक्षक उन्हें अशोक के सामने ले आये। इतने में विदीशा के पिता शाक्य नायक व गाँव के कुछ प्रमुख व्यक्ति वहाँ आये। पूछताछ से मालूम हुआ कि नर्तकियों ने आहार-पदार्थों में नशीली वस्तु का मिश्रण किया। यही वजह है कि सदा सावधान रहनेवाले अशोक के अनुचर उसके जोर से चिल्लाने के बाद भी नींद से उठ नहीं पाये। विदीशा के पिता ने सब कुछ सुनने के बाद कहा ''इनका भांडा फूट गया। अब हमें मालूम होना चाहिये कि यह अपराध किसने इनसे कराया?''

यश ने कहा ''हाँ, यह जानना बहुत ज़रूरी है।''

-सशेष

राकोलक की शस्त्र-चिकित्सा

धुन का पक्का विक्रमार्क पुन: पेड़ के पास गया। पेड़ से शव को उतारा और अपने कंधे पर डाल लिया। यथावत् वह श्मशान की ओर मौन बढ़ने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "राजन्, लोग इस भयंकर श्मशान में दिन में ही आने से डरते हैं। किन्तु तुम आधी रात में भी निर्भीक होकर विचर रहे हो। मेरा कहा मानो। अपना राजभवन चले जाओ और आराम से सोओ। क्यों व्यर्थ प्रयत्नों में अपनी जान पर खेल रहे हो। मैं नहीं समझता कि कोई स्वार्थ ऐसा करने से तुम्हें प्रेरित कर रहा है, क्योंकि तुम्हारे पास ऐसी कौन-सी संपत्ति नहीं, जिसपर तुम्हारा अधिकार नहीं, जिसका भोग तुम नहीं कर सकते। मैं जानूँ तो सही, इस आधी रात के समय किसकी सहायता करने के उद्देश्य से इतनी बेशुमार तक़लीफें झेल रहे हो। जो तुम्हारी सहायता चाहता है; तुम्हारे द्वारा

बैताल कथा

अपने स्वार्थ की पूर्ति करने का षडयंत्र रच रहा है; तुम्हें धोखा दे रहा है; वह आखिर है कौन ? कहीं वह कोई पंडित या मेधावी हो तो तुम्हें और जागरूक रहना चाहिये। क्योंकि स्वार्थी अशिक्षित से स्वार्थी पंडित, मेधावी बहुत खतरनाक है। जन्म से ही मंद बुद्धिवाले एक व्यक्ति ने, एक पिशाच की अच्छाई का लाभ उठाया और उसकी सहायता से मेधावी बना। जिस पिशाच की सहायता से वह मेधावी बना, उसी के साथ उसने द्रोह किया। ये तथाकथित मेधावी षडयंत्रकारी होते हैं। उनकी बुद्धि वक्र होती है। अपने स्वार्थ के लिए कुछ भी कर बैठते हैं। इनका विश्वास करना अपने पैरों पर स्वयं कुल्हाड़ी मार डालने के समान है। थकावट दूर करते हुए ऐसे द्रोही की कहानी मुझसे सुनो'' कहकर बेताल ने उसकी कहानी यों सुनायी।

विशाल देश में एक युवक था। उसके बचपन में ही उसके माँ-बाप गुज़र गये। उसके मामा ने उसे पाला-पोसा। वह जन्म से मंद बुद्धि का था। वह पढ़-लिख नहीं पाया, क्योंकि उसके दिमाग़ में कोई बात उतरती ही नहीं थी। इस कारण सब लोग उसे मंद कहकर पुकारते थे। उसका मामा धनवान था। उसकी एक बेटी थी, जो बदसूरत और विकृत थी। मरने के पहले मामा ने अपनी बेटी की शादी मंद से करायी।

मंद की बड़ी आशा थी कि राजा के आस्थान में काम करूँ। उसके लिए योग्य बनने के लिए वह पढ़ता ही रहा। उसकी नासमझी पर, उसकी बुद्धिहीनता पर उसके मित्र हमेशा उसका मज़ाक उड़ाते रहते थे। किन्तु सब लोग उसे चाहते थे। क्योंकि वह निडर था। भय उसे छू नहीं पाता था। मित्रों का कहा कोई भी साहस-पूर्ण कार्य करने के लिए वह सदा तैयार रहता था।

एक बार उसके दोस्तों ने मंद से एक बाजी लगायी। नगर से थोड़ी दूरी पर एक उजड़ा क़िला था। वहीं श्मशान भी था। लोग कहा करते थे कि वहाँ प्रेतात्माएँ घूमती-फिरती हैं। एक बार जो उस उजड़े किले में गये, वापस ही नहीं आये, इसलिए किसी ने वहाँ जाने का साहस नहीं किया। मंद को आधी रात के समय वहाँ जाना होगा और पहचान के रूप में कोई वस्तु लानी होगी। यही बाज़ी थी।

आधी रात को बिना डरे मंद किले में गया। घने अंधकार में, भयंकर ध्वनियों के बीच वह क़िले भर में घूमता रहा। कहीं कोई

चीज़ पाँवों से टकरा गयी, तो उसने उसे हाथ में लेकर देखा। वह किसी की खोपड़ी थी। पहचान के रूप में उसे ली और बाहर आकर उसने वह खोपड़ी मित्रों को दिखायी।

वे डर से थर-थर काँपने लगे और उसे किसी नदी में फेंकने के लिए जोर देने लगे। उसने उनकी बातों की परवाह नहीं की और खोपड़ी को ले आकर टांड पर छिपा दी। उस दिन रात को जब वह घोड़े बेचकर सो रहा था, तब किसी हलचल की बजह से उसकी आँखें खुलीं। जहाँ खोपड़ी रखी गयी थी, वहाँ भयंकर आकार का एक विचित्र प्राणी था। उसका शरीर तांबे के रंग में ढला हुआ था। सिर, दाढी व पुतलियाँ चांदी के रंग में थे। जलते बबूल की लकड़ियों की तरह आँखें जल रही थीं। मंद उस विकृत आकार को देखता ही रह गया।

"तुम्हारे धैर्य-साहस बहुत ही प्रशंसनीय है। तुमने अपने घर में मुझे अतिथि का स्थान दिया। जब-जब मेरा स्मरण करोगे तब-तब मैं तुम्हें दिखायी देता रहूँगा। आपस में गपचप करेंगे। अगर तुम्हें डर लगता हो तो खोपड़ी ले जाओ और वहीं फेंको, जहाँ से इसे ले आये। फिर कभी भी मैं तुम्हें दिखायी नहीं दूँगा।" उस आकारवान ने कहा।

"डर और मुझे। कभी नहीं। किसी भी हालत में नहीं।" मंद ने मुस्कुराते हुए पूछा "तुमने तो अपना परिचय नहीं दिया।"

"मेरा नाम राकोलक है। अपने जमाने में मैंने कितनी ही विद्याएँ सीखीं। किन्तु मेरा प्रिय विषय था शस्त्र-चिकित्सा।" उस आकारवान ने कहा।

मंद कुछ कहने ही वाला था कि इतने में मुर्गी की बांग सुनायी पड़ी, जो सुबह होने का संकेत था। बांग सुनते ही राकोलक अदृश्य हो गया।

दूसरे दिन आधी रात को मंद ने उसका स्मरण किया तो राकोलक प्रकट हुआ। दोनों दुर्गा के उजड़े मंदिर में जाकर बैठ गये और बहुत देर तक बातें करते रहे। तब से लेकर मंद अक्सर आधी रात को राकोलक से मिलता और सुबह होने के पहले घर लौटता था।

यों कुछ दिन गुजर गये। उसकी पत्नी ने देख लिया कि उसका पति आधी रात को चुपचाप वहाँ से खिसक जाता है तो उससे चुप रहा नहीं गया। एक दिन उसने कारण पूछ ही लिया तो मंद ने सच बता दिया।

"कहीं पिशाच से मैत्री हो सकती है?

मुझे भय है कि किसी दिन आप किसी आफ़त में फंस जायेंगे। किसी तरह उससे छुटकारा पाइये।'' मंद की पत्नी ने गिड़गिड़ाया।

''अगर मुझे हानि पहुँचाने का उसका इरादा होता तो पहले ही कर चुका होता। जब बात इतनी बढ़ गयी है तो उससे छुटकारा पाने की कोशिश करना भी खतरे से खाली नहीं। हो सकता है, वह मेरे इस प्रयत्न को जान जाए और मेरा सर्वनाश कर दे।'' मंद ने कहा।

कुछ दी दिनों में राकोलक को मालूम हो गया कि मंद कितना नासमझ और बेवकूफ़ है।

एक दिन जब दोनों शतरंज खेल रहे थे, मंद शुरू में ही हार गया। राकोलक नाराज़ हो गया और अदृश्य हो गया। अपनी बुद्धिहीनता की आप ही आप निंदा करते हुए मंद घर लौटा और निद्रा की गोद में चला गया। निद्रा में ही वह अत्यंत पीडा महसूस करने लगा और जाग उठा। सामने राकोलक खड़ा था। उसके हाथ में पैनी तलवार थी। उस मद्दिम प्रकाश में भी उस तलवार पर रक्त के बिंदु दिखायी दे रहे थे। भय के कारण मंद बेहोश हो गया।

थोड़ी देर बाद जब उसने आँखें खोलीं तो देखा कि राकोलक वहीं है। उसने हँसते हुए मंद से कहा, ''डरो मत, तुम्हें कोई ख़तरा नहीं है। तुममें अक़्ल नहीं थी। मुझे चाहिये, ऐसे दोस्त की, जो मेरी बराबरी का बुद्धिशाली हो। इसीलिये मैंने अब तुम्हें मेधावी बना दिया। अब से तुम्हारी मेरी दोस्ती और गाढ़ी होगी। तुम्हारे साथ समय काटने में मुझे बड़ा मज़ा आयेगा।''

बहुत ही कम समय में मंद ने समस्त विद्याएँ भली-भांति सीख लीं। उसकी असाधारण बुद्धिमत्ता ने सबको आश्चर्य में डाल दिया। राजा के आस्थान में उसे बड़ा ओहदा मिला। मंद की पत्नी को यह जानने में देर नहीं लगी कि उसके पति में हुए परिवर्तन का कारक पिशाच ही है।

एक रात को जब मंद चिंताग्रस्त था तो राकोलक में उससे चिंता का कारण पूछा।

''मैं छोटा था, तब मेरी शादी हुई, मेरी पत्नी बदसूरत है। फिर भी मैं उसे बहुत चाहता हूँ। उसका अंग सौष्ठ व बहुत ही सुँदर और आकर्षक है। उसके अनुरूप ही उसका रूप होता तो कितना अच्छा होता, कितनी सुँदर लगती'' मंद ने चिंता का कारण

बताया।

"मैं तुम्हारी पत्नी को सुंदरी बना सकता हूँ। पर, तुम्हें कुछ दिनों तक रुकना होगा। एक ऐसी सूरत ढूँढनी होगी, जो तुम्हारी पत्नी की उम्र की हो, जिसके शरीर का रंग बढ़िया हो, जो ऊँची भी हो।" राकोलक ने कहा।

मंद की समझ में नहीं आया कि वह कह क्या रहा है, फिर भी उसने सिर हिलाया।

एक महीने के बाद राकोलक ने मंद को नींद से जगाया और कहा "जरा एक बार अपनी पत्नी को देख आना।"

मंद पास ही के कमरे में गया। पत्नी को देखा तो उसे अपने आप पर विश्वास नहीं हुआ। उसकी पत्नी किसी प्रसिद्ध अप्सरा से भी अधिक सुँदर लग रही थी।

दूसरे दिन सबेरे मंद की पत्नी ने दर्पण में अपना रूप देखा तो ज़ोर से चिल्ला उठी। मंद ने उससे बताया कि राकोलक की वजह से उसे वह रूप प्राप्त हुआ। उसकी पत्नी को इस बात पर खुश होना था कि राकोलक के कारण वह रूपवती बनी, पर उल्टे वह अपने पति और राकोलक की मैत्री को लेकर भयभीत होने लगी। क्योंकि उसका विचार था कि एक पिशाच की दोस्ती किसी भी दिन आफ़त में फँसा सकती है; किसी भी अनर्थ के मार्ग पर ले जा सकती है।

अभी-अभी मंद को एक विषय मालूम हुआ। जिसका सिर उसकी पत्नी के गरदन पर है, वह पराये देश की एक स्त्री का सिर है। किसी ने उसकी हत्या कर दी और उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। उसका पति हत्यारे को ढूँढ़ता हुआ किसी भी क्षण मंद के नगर में आ सकता है। उस दिन रात को मंद ने राकोलक से असली बात बताने पर ज़ोर दिया।

"देवताओं की तरह वर प्रदान करने की शक्ति मुझमें नहीं है। मुझे जो भी मालूम है, वे हैं, चंद रहस्य विद्याएँ, शस्त्र-चिकित्साएँ। जानते हो, तुम्हें कैसे मेधावी बना सका? मैंने तुम्हारी मेधा निकाल दी और उसकी जगह पर एक मेधावी की मेधा रख दी। उसी तरह तुम्हारी पत्नी के सिर को काट दिया और उसी जगह पर एक रूपवती का सिर रख दिया।" राकोलक ने सच बता दिया।

"तो मतलब यह हुआ कि उस रूपवती की हत्या तुम्हीं ने की।" मंद नाराज़ होता हुआ चिल्ला पड़ा।

राकोलक की आँखें क्रोध से लाल-लाल हो गयीं। उसने भी चिल्लाते हुए कहा, "पूर्व

जन्म में मैंने पाय किये, इसी कारण मैं पिशाच बना। फिर भी मैं अब भी पाप क्यों करूँगा ? मैं नहीं जानता कि कारण क्या है ? किसी ने उस स्त्री का सर धड़ से अलग कर दिया और मैं उस सिर को उपयोग में ले आया''।

''जो हुआ, सो हुआ। अब उस रूपवती का पति हत्यारे को ढूँढते हुए किसी भी क्षण यहाँ आ सकता है। अगर मेरी पत्नी को वह देख ले और अगर उसने राजा से शिकायत की कि मैं ही उसकी पत्नी का हत्यारा हूँ तो मेरा क्या होगा। मैं कहीं का न रहूँगा।'' कहकर मंद ने अपना सिर पकड़ लिया। भय से काँपने लगा।

राकोलक ने उसकी कायरता पर ज़ोर - ज़ोर से हँसते हुए कहा ''डरो मत। मैं तुम्हारी मैत्री छोड़ नहीं सकता। तुम्हारी रक्षा के लिए अपनी शस्त्र-चिकित्सा का प्रयोग फिर से करूँगा। जिस दिन वह तुम्हारे ख़िलाफ़ शिकायत करेगा, उसी दिन तुम्हारा सिर उसके सिर की जगह पर होगा और उसका सिर तुम्हारे सिर की जगह पर होगा। दोनों सिरों की अदला-बदली करूँगा। तुम्हें क़ैद करने आये सैनिक उसे ले जायेंगे क्योंकि वह तुम्हारे रूप में होगा। राजा उसे सज़ा देगा। तुम्हें कोई हानि नहीं पहुँचेगी, क्योंकि तुम उसके रूप में हो। कैसी लगी इस राकोलक की योजना ?'' मंद मौन रहा।

दूसरे दिन सबेरे ही मंद ने राकोलक के कपाल को एक थैली में डाल दिया। नगर से दूर श्मशान में गड्ढा खोदा और उस कपाल को गड्ढे में गाड़ दिया। उसी दिन रात को अपनी पत्नी को लेकर वह कहीं दूर प्रांतों में चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाने के बाद विक्रमार्क से कहा ''राजन्, मंद के इस बरताव का क्या मतलब है ? राकोलक ने दो बार उसकी सहायता की। इस सहायता से मंद की भलाई ही हुई। तीसरी बार भी वह उसकी सलाह मानता तो उसे नगर छोड़कर कहीं दूर प्रांतों में जाने की ज़रूरत नहीं पड़ती। उसकी पत्नी यद्यपि पहले से ही उससे कहती रही कि राकोलक की मैत्री के बंधन से अपने को मुक्त करो, पर उसने उसकी बातें अनसुनी कर दीं। आख़िर पत्नी के प्रोत्साहन के बिना ही मंद ने राकोलक से छुटकारा पाया। क्या उसने समझा कि पिशाच से अब उसे कुछ लेना-देना नहीं है? उसकी अब ज़रूरत नहीं है? जिस राकोलक ने उसकी सहायता की,

जिसने उसे अशिक्षित से शिक्षित बनाया, उसी के साथ ऐसी कृतघ्नता का बरताव न्यायसंगत है? क्या यह उसके नीच स्वभाव का जीता-जागता उदाहरण नहीं? मेरे संदेहों के समाधान जानते हुए भी मौन रह जाओगे तो तुम्हारा सिर टुकड़ों में फट जायेगा।''

विक्रमार्क ने कहा ''यह नहीं कहा जा सकता कि मंद कृतघ्न था। उसके बरताव के पीछे सबल कारण थे। वास्तव में मंद को राकोलक की कोई आवश्यकता नहीं थी। आवश्यकता थी मंद की राकोलक को। राकोलक की मैत्री में स्वार्थ था। निस्वार्थ बुद्धि से उसने मैत्री का हाथ नहीं बढ़ाया। वह चाहता था कि एक और बुद्धिमान व्यक्ति से मैत्री करूँ, इसीलिए उसने मंद से बिना बताये ही उसकी बुद्धि बदल दी। मंद को यह सच्चाई मालूम नहीं थी कि अपनी बुद्धि के स्थान पर किसी और की बुद्धि उसमें मौजूद है। वह तो यह समझ बैठा था कि राकोलक ने उसे अक़्लमंदी का वर प्रदान किया। इसी कारण उसने उससे अपने पत्नी को भी सुँदर बनाने का वर माँगा। राकोलक ने जब सच्चाई उगल दी तब जाकर उसे वास्तविकता ज्ञात हुई। जब राकोलक ने रूपवती के पति के चंगुल से उसकी रक्षा करनी चाही और इसके लिए एक और बार शस्त्र-चिकित्सा का प्रयोग करना चाहा, तब उसकी चेतना जाग उठी। वह संभल गया। उसके कपाल को गड्ढे में गाड़कर उससे अपने को छुड़ा लिया। अगर उसके रूप का भी परिवर्तन होता तो वह कल्पना कर सकता था कि भविष्य में उस पर क्या बीतेगा। उसे किन-किन मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा। देह का अति मुख्य भाग है मुख। मुख को देखकर ही मानव पहचाना जाता है। मंद की इच्छा थी कि मंद बनकर ही रहूँ, किसी और के नाम से पहचाना न जाऊँ। वह किसी और का रूप धारण करे, तो मालूम नहीं, आगे-आगे वह नया जीवन कैसा होगा? इसी कारण मंद मद बनकर ही रहना चाहता था। उसने राकोलक की खोपड़ी को गड्ढे में गाड़कर अपना अस्तित्व बचा लिया। इसमें मुझे तो कोई कृतघ्नता नहीं दीखती।''

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल शव सहित ग़ायब हो गया और फिर से पेड़ पर जा बैठा।

आधार - अमिताभ श्रीवास्तव

असली बात

रेवा नामक गाँव में रामचंद्र नामक एक व्यक्ति था। उपदेश-पूरित व्याख्यान देने में वह पटु था। उसकी काफ़ी प्रसिद्धि थी। जिस किसी भी सभा में वह व्याख्यान देता था, बड़ी भीड़ लगती थी। परंतु वह थोड़ा-सा भुलक्कड़ था। इस कारण कभी-कभी उसकी हंसी उड़ायी जाती थी।

एक बार कुछ भक्तों ने रामचंद्र के व्याख्यान का आयोजन किया। आलय-प्राँगण में नारियल के पत्तों के नीचे वेदिका का प्रबंध हुआ।

रामचंद्र उठ खड़ा हुआ और अपने गले को साफ़ करता हुआ कहने लगा ''आज गोकुलाष्टमी है। श्रीकृष्ण का जन्म-दिन है। कृष्ण का अर्थ है काला। कालापन अंधेरे का प्रतीक है। अज्ञान नामक अंधकार को दूर भगानेवाले परमात्मा हैं श्रीकृष्ण। उस परमात्मा ने जन्म कहाँ लिया? जेल में। अब गहराई में जाएँ तो हमें ज्ञात हो जायेगा कि हर मानव का यह देह जेल के समान है। इस देह के अंदर आत्मा है। वह आत्मा ही परमात्मा है, श्रीकृष्ण है। यह त्योहार, यह कृष्णाष्टमी मानवों को आत्मज्ञान का बोध देती है।'' उसने सोचा कि भाषण को सुनकर लोग तालियाँ बजाएँगे।

परंतु उनमें से कुछ उठे और उसे सहानुभूतिपूर्वक देखने लगे तो कुछ और लोग अपनी हँसी को रोकने की चेष्टा में लगे थे।

यह देखकर रामचंद्र आश्चर्य में डूब गया और वेदिका पर बैठे ग्राम पंडित शिव शर्मा से पूछा ''पंडितजी, मेरे भाषण में क्या त्रुटियाँ रह गयीं? असंदर्भ बातें क्या मेरे मुँह से निकल पड़ीं?''

''महाशय, आप उत्तम कोटि के वक्ता हैं। आपके भाषण में त्रुटियों के होने का प्रश्न ही नहीं उठता। ऐसी कोई बात नहीं है। परंतु हाँ, एक असंदर्भ बात आपके मुँह से निकल पड़ी, जो स्पष्ट है। असली बात तो यह है कि आज कृष्णाष्टमी नहीं, रामनवमी है।''

- रामकृष्ण पांडे

विशाखपट्णम् से गोपालपुर

वर्णन : मीरा नायर ◆ चित्र : गोपकुमार

विशाखपट्णम् से उत्तर की ओर हमारी यात्रा जिस एक तटवर्ती सड़क से संपन्न होती है, वह भारत की ऐसी सबसे लंबी सड़कों में से है. इस सड़क पर 24 कि.मी. तै करके गोस्तनी नदी के मुहाने पर हम *भीमुनिपट्णम्* पहुंचते हैं. बड़ा सुहाबना स्थान है यह. 17वीं सदी में यह डच लोगों का अड्डा था. उनकी बस्ती के अवशेष टूटे-फूटे किले, चंद तोपों और एक पुराने कब्रिस्तान के रूप में आज भी मौजूद हैं. यहां का बालूतट पूर्वी भारत के सबसे सुंदर बालूतटों में से है और उसके कारण हरियालीभरा भीमुनिपट्णम् लोकप्रिय पर्यटन-स्थल बन गया है.

श्रीकाकुलम् जिला समुद्रतट पर आंध्र का सबसे उत्तरी हिस्सा है. इसी जिले के *अरसवल्ली* नामक स्थान पर आंध्र का एकमात्र सूर्य-मंदिर स्थित है. इस मंदिर का निर्माण 1778 ई. येलमंचिलि पुल्लाजी पंतुलु ने करवाया था. इसका स्थापत्य ऐसा है कि साल में दो बार सूर्य की किरणें देवमूर्ति के चरणों पर पड़ती हैं.

सूर्यनारायण का मंदिर

डच कब्रिस्तान
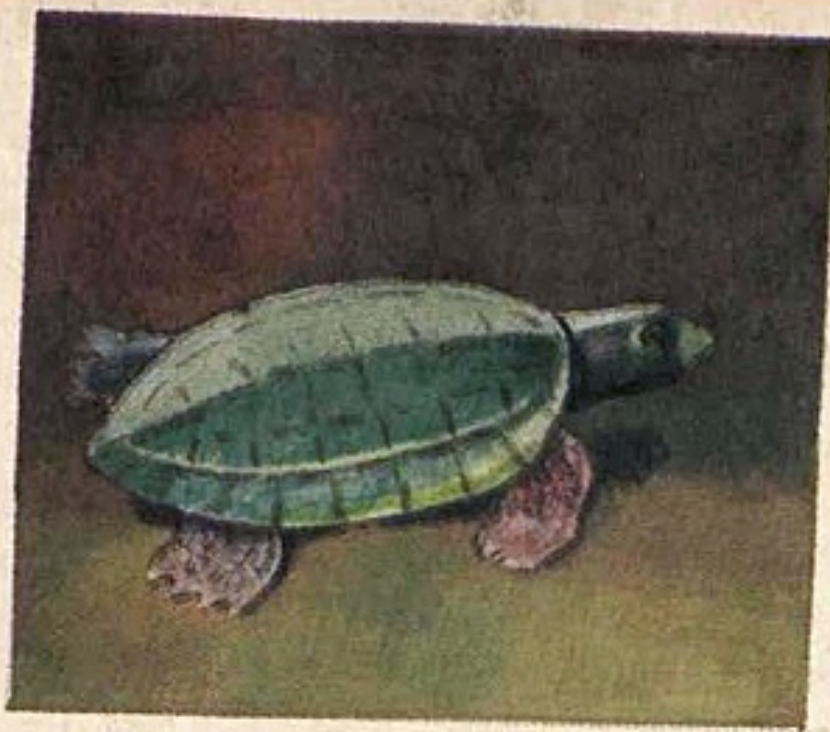
कूर्म (कछुआ)

हमारा अगला पड़ाव है *श्रीकाकुलम्,* जिसके नाम का अर्थ है – दिव्य कछुआ. इस तटवर्ती शहर का यह नाम यहां के विष्णु भगवान के मंदिर के कारण पड़ा है. यह हमारे देश का एकमात्र मंदिर है, जिसमें भगवान विष्णु कूर्म अर्थात् कछुए के रूप में पूजे जाते हैं, जो कि उनका द्वितीय अवतार था.

ऐसी मान्यता है कि अगर मृतकों की अस्थियां मंदिर के तालाब श्वेतपुष्करिणी में विसर्जित की जाएं तो वे कुछुओं में बदल जाती हैं. श्रीकाकुलम् जिले के उत्तरी छोर पर मगर तट से परे *माचकुंड* नदी आंध्र प्रदेश और उड़ीसा (शुद्ध रूप 'ओड़िशा') के बीच कुछ दूर तक सीमा बनाती है. माचकुंड जल बिजलीघर ने अगस्त 1955 में बिजली-उत्पादन शुरू किया था. यह दोनों राज्यों का पहला साझा और सफल औद्योगिक उपक्रम था.

पुराने जमाने में अधिकांश उड़ीसा और आंध्र प्रदेश के उत्तरी समुद्रतट का काफी हिस्सा मिल कर कलिंग कहलाता था. कलिंग अपनी समुद्री तिजारत के लिए मशहूर था और उसके जहाज श्रीलंका, म्यांमा (बर्मा), इंडोनीशिया तथा पूर्वी एशिया के देशों को जाया करते थे. भारत से श्रीलंका जा कर बसने वाले प्रथम आर्य लोग कलिंग से ही गये थे. पलौरा (जिसका उल्लेख

कलिंग का जहाजी बेड़ा प्रख्यात था.

महाभारत में है), अल्वा और चित्रपुरा यहां के मुख्य बंदरगाह थे.

भारत के प्राचीन इतिहास में कलिंग का महत्व इस कारण है कि सम्राट अशोक ने विकट युद्ध लड़कर इसे जीता और उसके बाद उसे युद्धों से घृणा हो गयी. उसने आचार्य उपगुप्त से बौद्ध धर्म की दीक्षा ली और अपना शेष जीवन धर्म का शासन देश-विदेश में स्थापित करने में लगाया.

चौथी से 13 वीं सदी ई. तक केसरी और गंग राजाओं के शासन में उड़ीसा बड़ा शक्तिशाली राज्य था. उनके समुद्री बेड़े बड़े मजबूत थे. उड़ीसा की समुद्री शक्ति पूरी तरह नष्ट हुई अंग्रेजों के शासन में. उड़िया लोग आज भी अपने पुरखों के समुद्री पराक्रम की स्मृति में प्रतिवर्ष कार्तिक पूर्णिमा को *बोइटा वंदन* (जहाज की वंदना) का पर्व मनाते हैं. उस रात को वे समुद्र देवता की पूजा करते हैं, जैसे कि सदियों पहले उनके पुरखे किया करते थे. उसके बाद वे बांस की बनी छोटी-छोटी किश्तियों में जलते दीये रखकर उन्हें नदियों और समुद्र में बहाते हैं.

इंग्लिश चैनल के आर-पार तैरनेवाले प्रथम भारतीय मिहिर सेन ने कलिंग से जावा तक पुराने समुद्री पथ का पता लगाने के लिए पालदार नाव की यात्रा एक बार आयोजित की थी. इसमें 40 फुट लंबी दो मस्तूलों वाली लकड़ी की नाव काम में लायी गयी थी, जैसी पुराने जमाने में कलिंग से रवाना हुआ करती थीं.

गोपालपुर दक्षिण उड़ीसा में एक शांत और मनमोहक तटवर्ती शहर
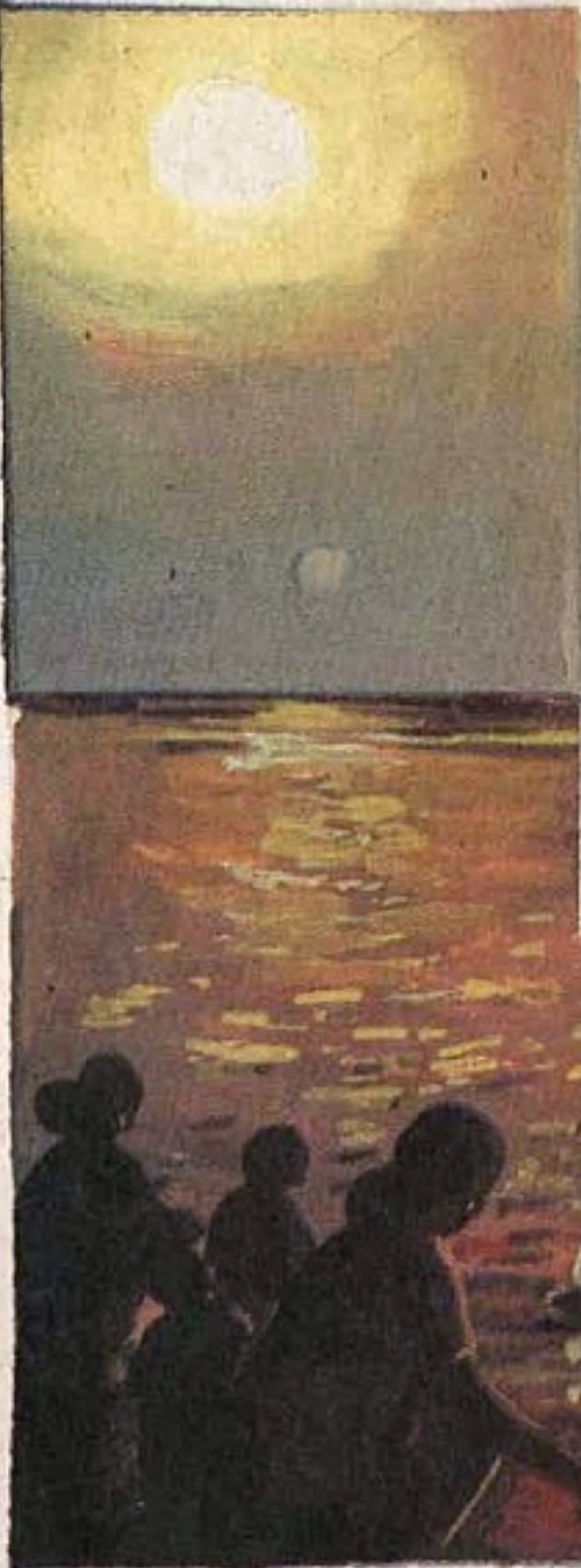
बोइटा बंदन का उत्सव

है. अंग्रेजों ने इसका नाम *गोपालपुर-ऑन-सी* रख दिया था. यहां के निवासी आज भी पुरानी परंपराओं को जीवित रखे हुए हैं. स्त्रियां सूर्योदय से पहले उठकर घर के आगे का सड़क का हिस्सा बुहार कर उस पर पानी का छिड़काव करती हैं और गृहद्वार पर चावल के आटे से सुंदर रेखाकृतियां बनाती हैं. सुबह-सुबह लोग समुद्रतट पर जमा हो जाते हैं. जब पूर्वी क्षितिज पर सूर्य भगवान दर्शन देते हैं, तब सब लोग हाथ जोड़ कर सिर नवाकर उनकी वंदना करते हैं. फिर वे समुद्र में डुबकी लगाते हैं.

यहां के समुद्रतट पर स्थान-स्थान पर सफेद रंग से रंगे ऊंचे बांस गड़े रहते हैं, जिनसे दिन के समय मछुओं को पता रहता है कि तट कहां पर है. रात को तटपर बना प्रकाशस्तंभ उनका मार्गदर्शन करता है.

यहां के मछुआरे तिकोने टोप पहनते हैं, जिससे आंध्र और बंगाल के मछुआरों से उनका अंतर आसानी से किया जा सके.

किश्ती को पानी से बाहर खींचते हुए मछुआरे

भाग्य-दुर्भाग्य

तृतीय भाग

गरीब ने महिमामयी मणि द्वारा मणिकुंडल के घावों की पीडा दूर कर दी। इस घटना के बाद वे दोनों और घने मित्र हो गये। मणिकुंडल ने ग़रीब को कितने ही व्यापार-सूत्रों व तत्संबंधी रहस्यों को स्पष्ट बताया। उसने बताया कि पहले उसने किस-किस प्रकार के व्यापार किये और वह जब समुद्र-यात्रा पर निकला तो किन-किन परिस्थितियों से गुज़रा। उसकी वर्णन-शैली इतनी स्पष्ट व प्रभावशाली भी थी कि ग़रीब को लगता था, मानों वे उसकी आँखों के सामने ही गुज़र रही हों। उसके शिष्यत्व में ग़रीब के भाषा-ज्ञान व व्यापार-ज्ञान में तीव्र प्रगति हुई। वह अब व्यापारिक मामलों में स्वयं निर्णय लेने लगा।

यों राक्षस-द्वीप में क़दम रखने के बाद साढे चार महीने बीत गये। इस अर्से में उसे द्वीप में जो धन-राशि मिली, उससे दुगुना धन कमाया। अनेकों मूल्यवान वस्तुएँ व्यापार में कमायीं। मणिकुंडल को भक्तिपूर्वक उसने कितनी ही भेंटें दीं और उससे बिदा ली। स्वदेश पहुँचने निकल पड़ा। महाराज ने उसे छे महीने की मोहलत दी थी। अब उसके पूरे होने में केवल पंद्रह दिन ही बाक़ी थे।

ग़रीब अब धनी व्यापारी होकर स्वदेश लौटा। उसने पहले पहल राजधानी नगर में एक भव्य भवन ख़रीदा। आवश्यक मरम्मतें करवायीं और सुंदर रंग डलवाये। दास-दासियों की नियुक्ति की। इन सब कामों के पूरा होते-होते पंद्रह दिनों की मोहलत पूरी हो गयी।

मोहलत के आख़िरी दिन ग़रीब ने बहुत बडे व्यापारी का वेष धारण किया और राजा के लिए क़ीमतें भेंटें लेकर सजी बग्घी में

मनोहर जोशी

बैठकर राजा से मिलने निकल पड़ा।

वह जाते-जाते कल्पना-लोक में विचरता रहा। जब वह अंत:पुर पहुँचा तो उसे मालूम हुआ कि पिछले दो महीनों से राजा तीव्र रूप से अस्वस्थ हैं। उनकी पीठ पर फोड़ा निकल आया और अच्छे से अच्छे वैद्य भी चिकित्सा करने में सफल नहीं हो पाये। इस फोड़े की वजह से राजा अत्यंत पीडा महसूस कर रहे हैं और उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही है।

यह जानकारी पाते ही ग़रीब को बहुत दुख हुआ। उसने अपने आपको इस बात पर कोसा कि इन पंद्रह दिनों में मैंने राजा के बारे में जानने की कोशिश क्यों नहीं की। वह फ़ौरन घर लौटा और अपूर्व मणि को लेकर फिर से अंत:पुर पहुँचा।

धनी व्यापारी के वेष में ग़रीब प्रतिष्ठित व्यक्ति लग रहा था। इसलिए राज-दर्शन में उसे कोई कठिनाई नहीं हुई। जब उसने कक्ष में प्रवेश किया तो देखा कि राजा बिल्कुल बलहीन हैं, मुख पर कांति रह नहीं गयी, शय्या पर एक तरफ़ मुख किये लेटे हुए हैं। छे महीनों के पहले जिस राजा ने बड़े ही आत्म-विश्वास के साथ बातें कीं, उसी राजा को इस स्थिति में देखकर ग़रीब का दिल दुख से उमड़ पड़ा, आँखों से आँसू निकल पड़े, अपने आपको काबू में रख नहीं सका। उसने मन ही मन भगवान से कहा "हे भगवान, तुम्हारी लीलाएँ कितनी विचित्र हैं। यह तुम्हीं जानते हो कि कब क्या होता है।"

एक क्षण के लिए ग़रीब ने निर्वेद स्थिति का अनुभव किया और फिर संभल गया। धीरे से वह राजा के पास आया। ढ़का हुआ न होने के कारण बड़ा फोड़ा साफ़ दिखायी दे रहा था। उसने अद्भुत मणि उस फोड़े पर रखा।

बस, दूसरे ही क्षण फोड़ा अदृश्य हो गया और चर्म पर फिर से कांति व्याप्त हुई। सुषुप्तावस्था में भी पीडा का अनुभव करते हुए राजा को अकस्मात् सुख महसूस हुआ। पीडा से मुक्त राजा ने आँखें खोलकर देखा।

वहीं बैठी महारानी ने जब यह दृश्य देखा तो उसकी आँखों से आनंद के आँसू बहने लगे। उसने अप्रयत्न ही हाथ जोड़कर ग़रीब को प्रणाम किया।

एक क्षण बाद राजा शय्या पर बैठ गया। उसे लग रहा था मानों उसे पुनर्जन्म प्राप्त हो गया हो। उसने आनंद-भरे स्वर में पूछा "किसने मुझे पुनर्जन्म प्रदान किया? वह महान व्यक्ति कौन है?"

महारानी ने ग़रीब की ओर इशारा किया। राजा आश्चर्य प्रकट करता हुआ उसे देख ही रहा था कि इतने में गरीब ने प्रणाम किया। राजा तुरंत शय्या से उतरा और ग़रीब के हाथ पकड़ते हुए कहा "महानुभाव, अपना सर्वस्व आपको अर्पित भी कर दूं तो भी मैं आपका ऋण चुका नहीं सकूँगा। मेरे लिए आप अपर धन्वंतरी हैं। अपना परिचय देकर मुझे कृतार्थ कीजिये।"

ग़रीब ने मुस्कुराते हुए कहा "महाप्रभु, हम एक दूसरे से पहले ही से परिचित हैं। नये परिचय की कोई आवश्यकता नहीं। छे महीनों के पहले ही भगवान ने हमें एक दूसरे से परिचय कराया।"

आवाज़ सुनते ही राजा ने ग़रीब को पहचान लिया और गद्गदाते स्वर में कहा 'तो तुम'। ग़रीब ने राजा का हाथ पकड़कर शय्या पर बिठाया और कहा "राजन्, आप ही मेरी स्थिति के कारणसंभूत हैं। आप मुझे इतना गौरव न दें। उस दिन जैसा बुलाया, उसी तरह बुलाइये। मैं अपने बारे

में बाद सब कुछ बताऊँगा । आप अभी बहुत कमज़ोर हैं । खाइये और शाम तक विश्राम कीजिये ।''

राजा ने मंत्रमुग्ध की तरह ग़रीब के कहे अनुसार ही खाना खाया और शाम तक घोड़े बेचकर सोया । शाम को नहा-धोया । अब वह अपने को बिल्कुल ही स्वस्थ, चिंता-मुक्त, पीडा-रहित महसूस करने लगा । उद्यानवन में बैठकर ग़रीब को बुला लाने की आज्ञा दी ।

थोड़ी ही देर में ग़रीब वहाँ पहुँचा । राजा के पास बैठ गया और राक्षस-द्वीप में क़दम रखने के बाद जो-जो हुआ, विस्तारपूर्वक सुनाया ।

ग़रीब ने सब कुछ बताने के बाद अंत में राजा से कहा ''प्रभू, मानता हूँ कि मनुष्य सर्वशक्तिवान है । किन्तु दैवत्व, मानवता से कुछ फुट ऊपर ही है । पंचभूतों से मिश्रित मनुष्य से सृष्टिकर्ता, वह सर्वेश्वर कुछ फुट ही सही, ऊपर ही है । विधि मनुष्य के जीवन को सदा क्षण-क्षण निर्देश देती ही रहती है । कौन-सा दुर्भाग्य, भाग्य में कब परिवर्तित होता है, कौन-सा भाग्य किस भयंकर दुर्भाग्य की ओर ढ़केलता है, यह किसी भी बड़े से बड़े व्यक्ति की भी कल्पना के बाहर है । मनुष्य को केवल चाहिये कि वह धर्म का आचरण करे, धर्म के पथ पर अग्रसर हो । वह धर्म-पथ ही उसे औन्नत्य की ओर ले चलता है, जिससे वह विधाता का लाड़ला बन जाता है । अपनी ही बात लीजिये । मुझे राक्षस-द्वीप भेजकर आपने जिस दुर्भाग्य का शिकार मुझे बनाना चाहा, वही आपका भाग्य बना । क्या इस सत्य को आप अस्वीकार कर सकते हैं?''

गंभीर होकर राजा ग़रीब की बातें ध्यान से सुन रहा था । उसने हाथ जोड़ते हुए कहा ''यह नमस्कार पहले उस जगन्नाथ को, फिर उसके दूत तुम्हें । तुम्हीं ने बताया था कि इस संसार में जितने भी अच्छे लोग हैं, वे सब उसी के दूत हैं । याद है ?'' कहता हुआ राजा हृदयपूर्वक हँसा ।

रमणीय उस उद्यानवन में चांदनी की धवल कांति, तब तक कोने-कोने में भगवान की स्वच्छ व पवित्र मुस्कान की तरह मनोहर रूप से चमक उठी ।

(समाप्त)

सुवर्ण रेखाएँ - १९

१. अद्‌भुत टिकाल मंदिर?

चक्रों व वज़न ढोनेवाले जंतुओं की सहायता के बिना ही पिरामड के आकार में पथ्थरों के मंदिरों का निर्माण हुआ। उत्तम शिल्पी मायालुओं ने इनका निर्माण किया।
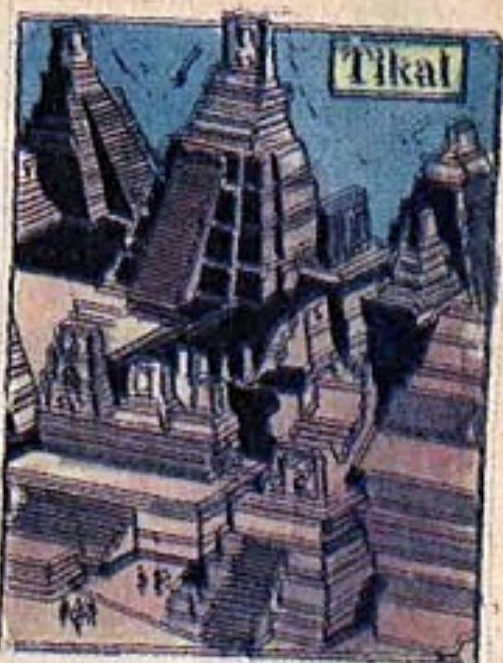
संसार में इन्हें कहाँ देख सकते हैं ?

वे केवल शिल्पी ही नहीं थे, बल्कि उत्तम खगोल शास्त्रज्ञ व गणित शास्त्रज्ञ थे। ई.स. २५०-९०० के मध्यकाल में मायालुओं की नागरिकता प्रकाश में आयी।
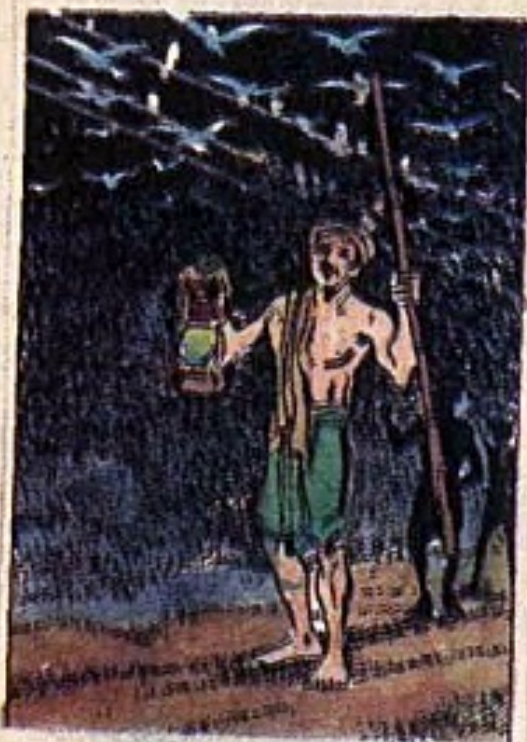
२. वह कौन-सा गाँव है, जहाँ सितंबर और अक्तूबर के बीच पक्षी किसी की भी समझ में न आनेवाले विचित्र रीति से व्यवहार करते हैं?

बरफ़ बरसनेवाले उन रातों में तरह-तरह के पक्षी भूमि पर किसी भी प्रकार का प्रकाश दिखायी क्यों न पड़े, उसमें कूद पड़ते हैं और अपनी जान दे देते हैं। कुछ और पक्षी भूमि पर गिर जाते हैं और नशे में पड़े रहते हैं। तब ग्रामीण उन्हें आसानी से पकड़ लेते हैं। शास्त्रज्ञ इस विचित्र घटना के तरह-तरह के कारण बताते हैं। फिर भी अब तक यह ज्ञात नहीं हो पाया कि पक्षियों की इस विचित्र आत्महत्या का असली कारण क्या है ?

३. दो महाद्वीपों में विस्तरित नगर?

प्राचीन और मध्य युग में बैजांटियम, कान्स्टांटिनोपिल के नाम से पुकारा जानेवाला यह नगर यूरोप व एशिया द्वीपों में विस्तरित है। अब वह यूरोप के एक मुस्लिम देश की राज-धानी है।

चित्र-पहेली

समुद्री इन जलचरों के नाम बताइये।
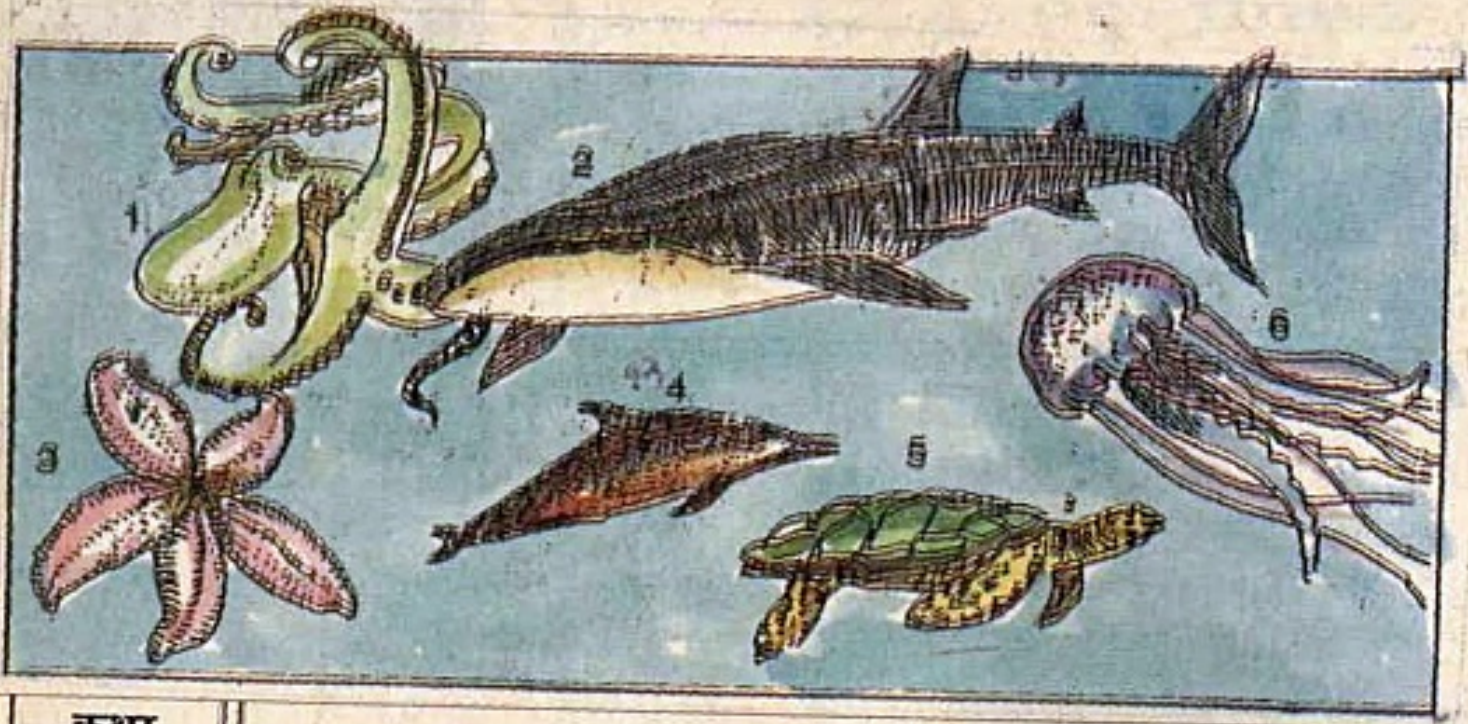
कथा पहेली

सेठ गोविंददास के घर में चोरी हुई। १,४०,००० रुपयों की क़ीमत की चीज़ों की चोरी हुई। पिछले तीन महीनों में जो चोरियाँ हुई, उनमें से यह पाँचवाँ है। मालूम हुआ कि चोर ने पिछली चोरियों में जिस प्रकार खिड़कियों के शीशों को फोड़ा और अंदर प्रवेश किया, उसी प्रकार इस बार भी अंदर आया। इन्स्पेक्टर देशाय खिड़की के पास ही के बगीचे में गिरे शीशे के टुकड़ों को गौर से देखने लगा। घर का रखवाला तब वहाँ आया और उसके बगल में खड़ा हो गया।

"मैंने कोई आवाज़ नहीं सुनी। आधी रात के बाद जब एक्स्प्रेस रेल-गाड़ी गुज़रती है, तब चोर ने खिड़की की शीशियाँ फोड़ी होगी। रेल की आवाज़ के कारण दूसरी कोई आवज सुनायी नहीं पड़ती है न? जो और चोरियाँ इस जगह पर हुई, कहा जाता है कि ठीक इसी समय पर चोर घरों के अंदर घुसा।" उस रखवाले ने कहा।

"इस घर में घुसे चोर को इस बात से डरने की जरूरत भी नहीं कि घर के अंदर जो हैं, वे जागे हुए हैं। साफ़-साफ़ बताओ कि चोरी का माल कहाँ छिपा रखा?" इन्स्पेक्टर ने नाराज़ हो गंभीरतापूर्वक पूछा।

रखवाले ने काँपते हुए अपना अपराध स्वीकार कर लिया। इन्स्पेक्टर को कैसे पता चला कि वह रखवाला ही चोर है।

शौकीले सवाल

१. शक्कर की छे घनात्कार ठोस वस्तुएँ क्यूब्स तीन चाय की प्यालियों में ऐसी डाली जाएँ, जिससे हर प्याली में वस्तुएँ विषम संख्या में हों। छहों वस्तुओं का इस्तेमाल होना चाहिये। किसी को भी तोड़ना नहीं चाहिये। समस्या का परिष्कार कैसे करेंगे?

२. आपके मामा की बहन अगर आपकी बुआ नहीं हुई तो क्या कहलायेगी।

३. केले का तेल किससे निकलता है?

- केला
- शक्कर
- कोयला

४. खाली पिंजडे में कितने बंदरों को भेज सकते हैं?

५. पक्षी दक्षिणी दिशा की ओर क्यों उड़ते जाते हैं?

६. मेरे पास एक घड़ी है। दिन में दो ही बार वह सही समय दिखाती है। बाकी समयों पर वह सही समय नहीं दिखाती। वह कैसी घड़ी है?

करके देखिये :

अंडे के खपड़े से कागज़ दाब बनाइये

खाली अंडे के खपडों को साफ़ धोइये। प्लास्टर आफ पारिस का गोंद बनाइये। अंडे को उससे भरिये। प्लास्टर आफ पारिस जब सूख जायेगा, सख्त हो जायेगा, तब अंडे को उल्टा घुमाइये।

बाद अपनी पसंद का रंग अंडे पर डाल लीजिये।

अब आपके उपयोग के लिए तैयार है - कागज़ दाब
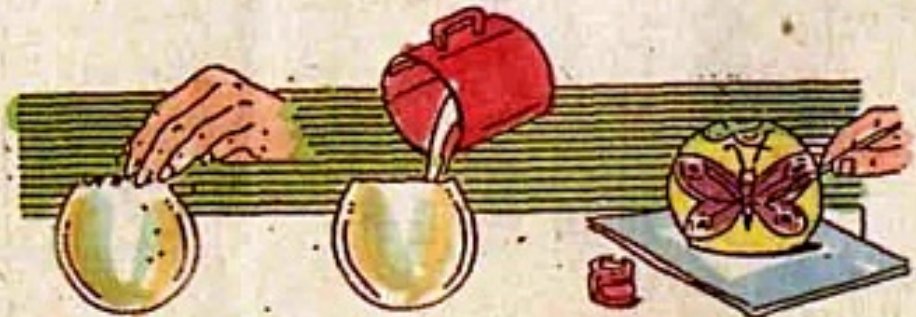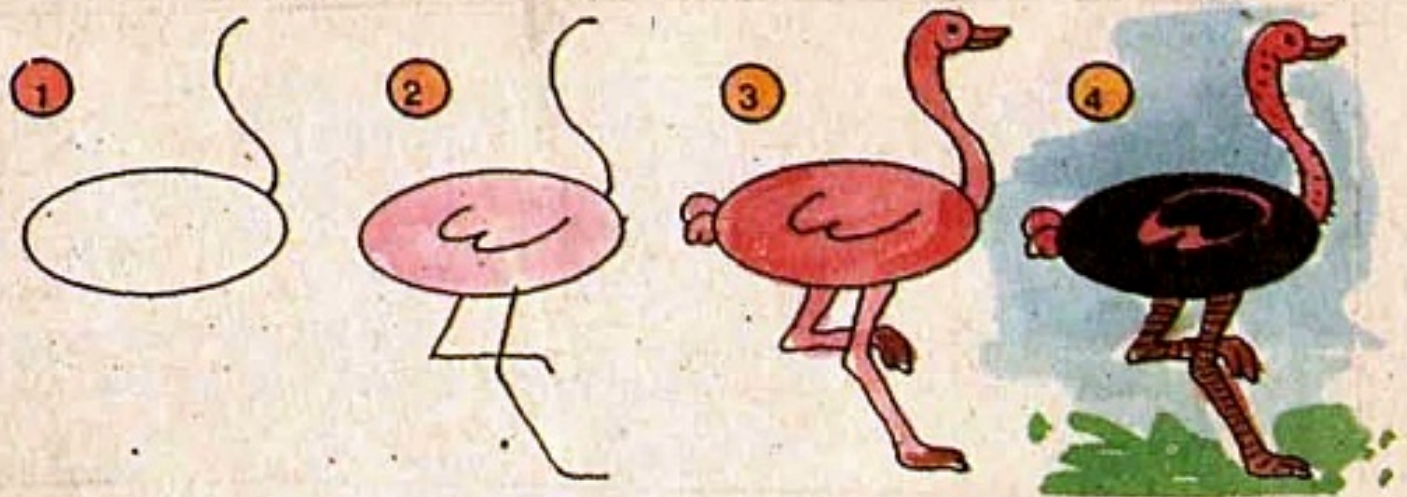
सुवर्ण रेखाएँ - १४ के उत्तर

संसार में कहाँ ?

१. इंग्लैंड के केंट के डोवर में
२. बिहार के पटना में
३. [illegible]
४. पूर्वी टर्की का क्यापडोसिया
५. दक्षिण अफ़्रीका का क्रूगर नेशनल पार्क

चित्र - पहेली

१. दूसरी-बूढ़ी का चेहरा। लड़की का गाल नाक की तरह, लड़की के गले के चारों ओर घिरा हुआ रिब्बन बूढ़ी के मुँह की तरह दिखायी देता है।

२. चक्र के अर (स्पोक्स) अलग-अलग स्पष्ट दिखायी देते हैं। वेग से जानेवाले साइकिलों में वे अलग-अलग दिखायी नहीं देते।

कथा - पहेली

चक्रवर्ती अशोक के ज़माने में अमरूद के पेड़ हमारे देश में नहीं थे। यूरिपियन उसे हमारे देश में ले आये।

शौकीले सवाल

१.

२. संभव नहीं

३.
अ. बासिलिस्क
आ. ड्रागन
इ. फोनिक्स
ई. यूनिकाम

४. मोहन ने लाल टोपी पहनी। विनय की टोपी भी लाल है। इसलिए रामू ने अंदाज़ा लगाकर बताया होगा कि उसने काली टोपी पहनी।

महाभारत

"भाइयो, हमारा अज्ञातवास-काल प्रारंभ होने जा रहा है। इस अवधि में हमें बड़ी ही सतर्कता से रहना होगा। किसी को मालूम होना नहीं चाहिए कि हम कौन हैं। बताओ कि एक वर्ष का यह अज्ञातवास किस देश में बिताएँ?" धर्मराज ने अपने भाइयों से पूछा।

"पांचाल, चेदि, मत्स्य, शूरसेन, पटच्चर, वीशार्ण, नवराष्ट्र, मल्ल, साल्व, युगंधर, कुन्ति, सुराष्ट्र, अवंती आदि देश अति संपन्न देश हैं। वहाँ की प्रजा सुखी है। फसलें अच्छी हो रही हैं। इन देशों में सामाजिक व्यवस्था सदृढ़ है। इन देशों में से किसी भी देश में हम अपना अज्ञातवास-काल बिता सकते हैं। धर्मदेवता का आशीर्वाद व अनुग्रह हमें है, अतः मेरा विश्वास है कि हमारे अज्ञातवास में कोई विघ्न नहीं होगा।" अर्जुन ने अपना विचार व्यक्त किया।

"मत्स्य देश का शासक विराट धर्मशील है, बलवान है, हमारा शुभ-चिंतक है। हम एक साल वहीं रहें तो उत्तम होगा। अब आप बताइये कि आप लोग कौन-कौन-सी वृत्ति अपनाना चाहते हैं?" धर्मराज ने शेष चारों पांडवों से पूछा।

अर्जुन ने दुख-भरे स्वर में पूछा "अग्रज, हमारी बात छोड़िये। आपने आज तक किसी की अधीनता में काम नहीं किया, कभी किसी की सेवाओं में लगे नहीं रहे। फिर आप कैसे विराट के यहाँ नौकरी कर पायेंगे? यह सोचने मात्र से मेरा हृदय दुख से पीडित हो उठता है।"

धर्मराज ने कहा "मैं ब्राह्मण का वेष धरूँगा, मेरा नाम होगा कंक। इस वेष में और इस नाम से मैं विराट की राजसभा में प्रवेश करूँगा। चौपड़ का खेल खेलकर राजा, मंत्रियों व सामंतों को प्रसन्न रखूँगा। अगर मुझसे पूछा जाए कि इसके पहले तुम क्या

अज्ञातवास का आरंभ - ३८

करते थे तो मैं कहूँगा कि मैं धर्मराज के निकट मित्रों में से हूँ और उन्हीं के साथ रहता था।'' उसने भीम को संबोधित करते हुए उससे पूछा ''भीमसेन, तुम बताओ, विराट के यहाँ क्या काम करने का विचार है ?''

''रसोई बनाने में मैं सिद्धहस्त हूँ। वल्लव मेरा नाम होगा। विराट को ऐसे पकवान बनाकर खिलाऊँगा, जिन्हें तब तक उसने नहीं खाया होगा। बिना किसी हथियार के लकड़ियों को तोड़ूँगा। लकड़ियों के बड़े-बड़े गठ्ठों को आसानी से ढोऊँगा। मैं अपने कार्यों के द्वारा राजा का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करूँगा, जिससे वे किन्हीं साहस-पूर्ण कार्यों में मेरा उपयोग करें। बलवान व माने-जाने मल्लों से भिड़कर मल्लयुद्ध में जीतूँगा और राजा के यश में और चार चाँद लगाऊँगा। अगर वे पूछें कि पहले तुम क्या काम करते थे, कहाँ काम करते थे तो बताऊँगा कि धर्मराज के यहाँ गुलाम था। मेरा रहस्य न खुले, इसके लिए आवश्यक सावधानी बरतूँगा। आप मेरी तरफ़ से निश्चिंत रहिये।''

अर्जुन की समस्या का हल पूर्व ही हो गया। ऊर्वशी ने उसे नपुंसक हो जाने का शाप दिया था। इंद्र ने उसपर दया करके आश्वासन दिया था कि यह शाप उसके अज्ञातवास-काल में काम आयेगा।

''मेरा नाम बृहन्नला होगा। हाथ की कुहनी से लेकर कलई तक कंकण पहनूँगा। लोग जान नहीं पायेंगे कि मैं पुरुष हूँ या स्त्री। उस वेष में विराट के अंत:पुर की स्त्रीयों का मनोरंजन करूँगा। मुझसे पूछने पर कि पहले तुम क्या करते थे तो बताऊँगा कि द्रौपदी की परिचर्याएँ करता था'' अर्जुन ने कहा।

''मेरा नाम होगा दामग्रंथि। विराट के अश्वों का प्रशिक्षक बनूँगा। अश्वों की बीमारियों की चिकित्सा करूँगा। अश्व चिकित्सा मैं भली-भांति जानता हूँ। कहूँगा कि पूर्व धर्मराज के यहाँ अश्व-अधिकारी का काम करता था'' नकुल ने कहा।

''तंत्रीपाल के नाम से विराट की गायों को पालूँगा। पहले भी आप ही की आज्ञा के अनुसार यह काम करता था, इसलिए मेरे लिए यह कोई नया काम नहीं है। ऐसी कोई बात नहीं, जो मैं गायों और सांडों के बारे में नहीं जानता'' सहदेव ने कहा।

धर्मराज मन ही मन इस बात पर दुखी था कि द्रौपदी क्या काम संभालेगी। उसने आज तक सेवाएं ही स्वीकार कीं, सेवाएँ नहीं कीं। सुकुमारी है, पतियों के सहारे जीवन-यापन करती हुई पतिव्रता है।

द्रौपदी ने धर्मराज की शंका को दूर करते हुए कहा "मेरे लिए आप क्यों चिंताग्रस्त हैं। सैरंध्री-वृत्ति आदरणीय वृत्ति है। अन्य दासियों की तरह उसके साथ व्यवहार किया नहीं जाता। इस वृत्ति को अपनाकर मैं अंत:पुर की स्त्रीयों के केशों का अलंकार करूँगी, विराट की पत्नी रानी सुदेष्णा के पास रहस्यपूर्वक रहूँगी।"

भाइयों तथा द्रौपदी के निर्णयों से धर्मराज संतुष्ट हुआ। उसने धौम्य, सूतों तथा अन्य नौकरों को द्रुपद के यहाँ रहने को कहा। इंद्रसेन व अन्य मंत्रियों से कहा कि वे खाली रथ लेकर द्वारका जाएँ। सबको सावधान किया कि पांडवों के बारे में कोई पूछे तो उनसे कहना कि हम कुछ नहीं जानते।

धौम्य ने पांडवों को स्पष्ट बताया कि राजाओं के यहाँ सेवाओं में लगे लोगों के क्या-क्या धर्म होते हैं और उनकी व्यवहार-शैली कैसी होनी चाहिए। जब सब अपने-अपने लक्ष्य-स्थल की ओर निकल पड़े तब पांडव अपने हथियार सहित द्वैतवन से निकले। वनों, पर्वतों, नदियों को पार करते हुए मत्स्य देश में प्रवेश किया। मत्स्य देश दशार्ण देशों के उत्तर में, पांचाल के दक्षिण में, शूरसेन देश के मध्य है।

द्रौपदी ने कहा "यहाँ खेत, पथ बड़ी मात्रा में हैं। लगता है, विराटनगर यहाँ से
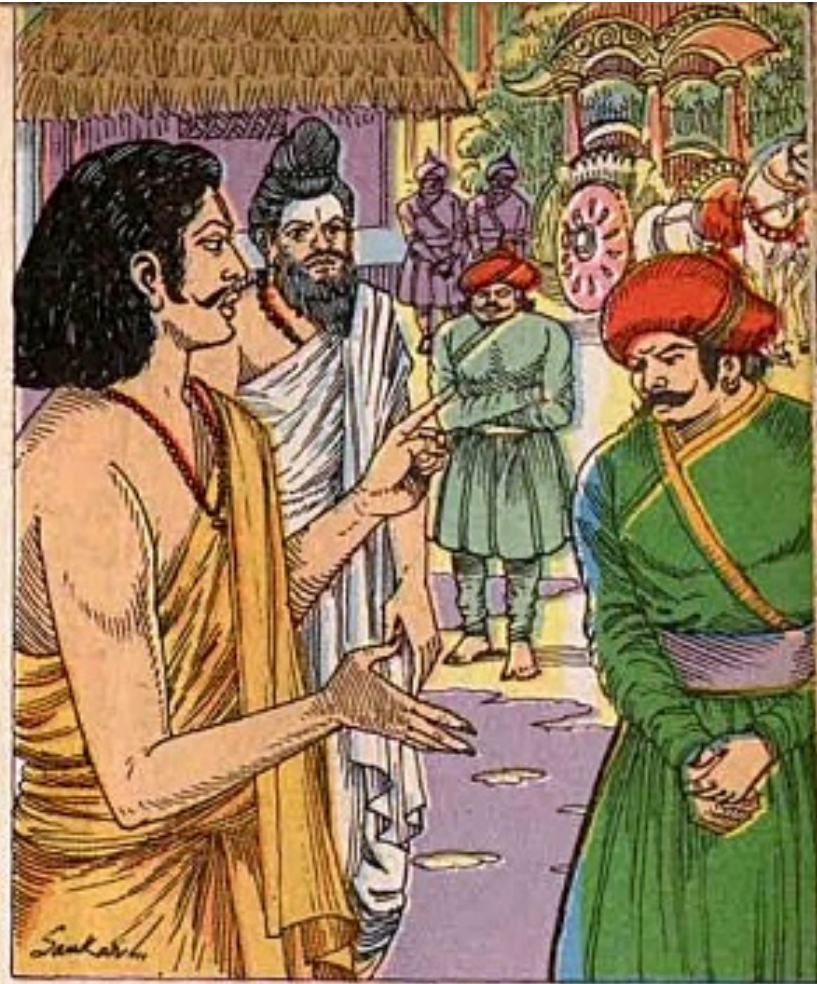
बहुत दूर है। मैं बहुत थक गयी हूँ। सुबह तक यहीं ठहर जाएँगे।"

धर्मराज ने निर्णय लिया कि किस मार्ग पर चलकर जंगल पार करना है। उसने अर्जुन से द्रौपदी को ढोकर ले आने को कहा। इस प्रकार वे विराटनगर की सरहद पर पहुँचे। तब धर्मराज ने अपने हथियारों के बारे में सोचा। उनको लेकर नगर-प्रवेश करना नहीं चाहिये। अर्जुन का गांडीव आयुध जगत् विख्यात है। पांडवों के पकड़े जाने के लिए यही एक आयुध पर्याप्त है। इसलिए धर्मराज ने अर्जुन से कहा कि कोई ऐसा गुप्त स्थल ढूँढो, जहाँ ये हथियार सुरक्षित रखे जाएँ।

अर्जुन ने चारों तरफ़ अपनी आँखें दौड़ायीं। उसने एक श्मशान देखा और देखा कि उस

श्मशान में विस्तृत रूप से फैला हुआ शमी वृक्ष है। साधारणतया ऐसे प्रदेशों में कोई नहीं आता। अगर कोई आया भी तो शमी वृक्ष का ऊपरी भाग किसी को दिखाई नहीं देता। अतः अर्जुन ने निर्णय किया कि अपने सभी हथियार उस वृक्ष की घनी टहनियों में छिपाये जाएँ।

पांडवों ने अपने धनुषों की डोरियाँ उतार दीं और ज़मीन पर रख दिया। अपने खड्ग भी धनुषों के साथ रख दिया। धर्मराज के कहे अनुसार नकुल शमी वृक्ष पर चढ़ गया और वृक्ष के घने पत्तों के बीच हथियारों को छिपा दिया। पानी बरसे भी तो उन हथियारों पर एक बूँद भी नहीं गिरेगी। उनपर उसने एक शव को ढक दिया।

शव को पेड़ पर चढ़ाते हुए कुछ पशु-पालकों ने देख लिया। पांडवों ने उनसे कहा "एक सौ आठ सालों की उम्र की हमारी माँ स्वर्ग सिधारीं। अपने वंश के आचार के अनुसार हमने उस शव को पेड़ पर रख दिया।"

फिर विराट नगर जाते हुए धर्मराज ने एक स्थल पर रुककर दुर्गा का स्मरण करते हुए प्रार्थना की "माँ, हम तुम्हारी शरण में हैं, हमारी रक्षा करो, हमारा ध्यान रखो।"

दुर्गा देवी अपने दिव्य रूप में प्रत्यक्ष हुई। कहा "निकट भविष्य में तुम युद्ध में जीतोगे। तुम्हारा कल्याण होगा।" आशीर्वाद दिया और अंतर्धान हो गयीं। तदनंतर धर्मराज ने नदी में स्नान किया। हाथ जोड़कर धर्मदेवता से प्रार्थना की "यक्ष बनकर मुझे वर देने का जो वादा कर चुके, वह अब माँग रहा हूँ।"

तक्षण ही बड़ी ही विचित्र घटना घटी। धर्मराज गेरुवें रंग के वस्त्र पहने हुए दिखायी पड़े। उनके हाथ में कमंडल भी था। वे यति लगने लगे। बाकी पांडवों के वेष-धारण के लिए आवश्यक सामग्री भी वहाँ पायी गयी। सबों ने अपने लिए आवश्यक सामग्रियाँ ले लीं। भविष्य में जिस-जिस वृत्ति को चुनने का उन्होंने निश्चय किया, उस वृत्ति के अनुकूल वेष-धारण किये।

धर्मराज ने पासों को अपने दुपट्टे के पल्लू में बाँध लिया और विराट की राज्यसभा में गया। यद्यपि धर्मराज यति के वेष में था, फिर भी उसके मुख पर विद्यमान प्रकाश-पुंज को देखकर विराट हतप्रभ हो गया। विराट को लगा कि अगर उसके साथ उसका परिवार भी होता तो वह यति चक्रवर्ती

लगता ।

विराट के पास आकर धर्मराज ने कहा, ''राजन्, मैंने अपना समस्त खो दिया । कुछ समय तक आपकी राजसभा में रहने की इच्छा रखता हूँ । मैं बैयाधृपद गोत्र का हूँ । मेरा नाम कंक है । मैं पहले धर्मराज के यहाँ था और उनके आप्तों में से हूँ । अगर मैं जुएँ में धर्मराज के हाथों हारता तो वे कभी भी मुझसे धन लेते नहीं थे । मैं चाहता हूँ कि आप भी मेरे साथ ऐसा ही व्यवहार करें ।''

विराट ने कहा ''मेरे परिवार में से किसी ने तुम्हारा कुछ बिगाड़ा तो मैं उन्हें दंड दूँगा । अगर कोई तुमसे धन-धान्य की याचना करे तो मुझे बताओ । मैं उन्हें धन-धान्य दूँगा । जैसा व्यवहार सब मुझसे करते हैं, वैसा ही व्यवहार सभी तुम्हारे साथ भी करेंगे ।''

थोड़ी देर बाद काले वस्त्र पहनकर भीम राजा के पास आया । उसके एक हाथ में करछुल और दूसरे हाथ में तलवार थी । विराट को प्रणाम करके उसने कहा ''मेरा नाम वल्लव है । मेरी नियुक्ति हो तो तरह-तरह के रुचिकर पकवान बनाऊँगा और आपको संतुष्ट रखूँगा ।''

''तुम्हें देखते हुए लगता तो नहीं कि तुम एक रसोइये हो, मुझे विश्वास ही नहीं हो रहा है ।'' विराट ने कहा ।

''धर्मराज जानते हैं कि इस विद्या में मैं कितना पटु हूँ । बल में भी मैं किसी से कम नहीं हूँ । अपने मनोरंजनार्थ हाथियों, सिंहों आदि जंतुओं से भिड़वाना चाहते हों तो भिड़वाइये और देखिये कि मैं कितना बलशाली हूँ । '' भीम ने कहा ।

''ठीक है, तुम हमारे रसोईघर में मुख्य रसोइया बनकर काम करो ।'' कहकर विराट

ने भीम को रसोईघर भिजवाया।

द्रौपदी गंदे व पुराने वस्त्र पहनकर, केशों को कंधों पर फैलाये सैरंध्री के वेष में गलियों में घूम रही थी। नगरवासियों ने पूछा, "देवी आप कौन हैं? क्या करती हैं?"

द्रौपदी ने उनसे कहा, "मैं सैरंध्री हूँ। मेरा पोषण करने कोई तैयार हों तो मैं उनकी सेवा करूँगी।"

राजभवन के ऊपरी भाग पर टहलती हुई रानी सुदेष्णा ने द्रौपदी को देखा और उसे अपने पास बुलवाया। पूछा, "तुम कौन हो? क्या काम करती हो?"

"देवी, मैं सैरंध्री हूँ। मैं केश-अलंकार जानती हूँ। बालों में फूलों को सजाने की कला में प्रवीण हूँ, पुष्प मालाएँ गूंथने में भी मेरी बराबरी का कोई नहीं। कृष्ण की पत्नी सत्यभामा, पांडवों की पत्नी द्रौपदी ने भी मेरी भरपूर प्रशंसा की। द्रौपदी मुझे मालिन कहकर पुकारती थीं।" सविनय द्रौपदी ने कहा।

"तुम सुँदर इतनी हो कि पुरुषों की बात तो दूर, स्त्रीयाँ भी तुमसे आकर्षित होंगीं। मुझे भय है कि महाराज तुम्हें एक बार देख लेंगे तो मेरी सूरत देखना ही नहीं चाहेंगे। मुझे डर है कि मैं तुम्हें अपने अंतःपुर में रख लूँ तो कहीं वे तुम्हारे दास न हो जाएँ।" रानी सुदेष्णा ने कहा।

"महारानी, विराट राजा या कोई भी मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकता। महाबलशाली पाँच गंधर्व राजकुमार मेरे पति हैं। उनकी दृष्टि हर क्षण मुझी पर केंद्रित रहती है। बस, केवल ऐसे काम मत सौंपिये कि किसी का पाँव धोऊँ अथवा जूठन खाऊँ। शेष जो भी काम आप मुझे सौंपेंगीं, बड़ी लगन के साथ करूँगी। मुझे साधारण स्त्री समझकर मेरे साथ कोई दुर्व्यवहार करेगा, मुझे छेड़ेगा तो किसी की जानकारी के बिना मेरे पति रातों रात उसे मार डालेंगे।" द्रौपदी ने कहा।

उसके इस आश्वासन पर रानी सुदेष्णा ने द्रौपदी को नौकरी पर रख लिया। तदुपरांत नपुंसक के वेष में अर्जुन राजा विराट के पास आया। उसने ग़ाढ़े लाल रंग के वस्त्र पहन रखे थे। भरी राजसभा में आकर उसने विराट से कहा "राजन्, मेरा नाम बृहन्नला है। नाट्य कला में मैं असमान हूँ। बाल सँवारने में मैं कुशल हूँ। फूल सजाने में भी मैं दक्ष हूँ।"

विराट को उसकी बातों का विश्वास नहीं

हुआ "तुम्हारे लंबे-लंबे हाथों, ऊँची-ऊँची भुजाओं को देखते हुए लगता है कि तुम धनुर्धारी हो।"

"नहीं महाराज, मैं यह भी नहीं जानती कि धनुष क्या होता है। संगीत का ज्ञान रखती हूँ, वीणा, मृदंग बजा सकती हूँ, नाच सकती हूँ।"

विराट ने अपनी पुत्री उत्तरा को बुलवाया और कहा "पुत्री, इसका नाम बृहन्नला है। इसी से नृत्य सीखो" अर्जुन उत्तरा के साथ-साथ अंतःपुर गया।

थोड़ी देर बाद जब विराट अपने अश्वों को देखने गया तब उसने देखा कि नकुल उन अश्वों की तरफ़ घूर-घूरकर देख रहा है। उसने अपने सेवकों से कहा "लगता है उस युवक को अश्वों का अच्छा ज्ञान है। उसे सभा में भेजो" कहकर वह वहाँ से चला गया।

नकुल ने सभा में आकर विराट का दर्शन किया और कहा "महाराज, जीविका के लिए आपके देश में आया हूँ। मुझे अपने अश्वों का अधिपति बनाइये। घमंडी घोड़ों को वश में लाना, उनकी बीमारियों की चिकित्सा करना मेरे बायें हाथ का खेल है। बहुत पहले मैं धर्मराज के घोड़ों की देखभाल करता था। मेरा नाम दामग्रंधि है।"

विराट उसकी बातों से संतुष्ट हुआ और उसे अपने घोड़ों व रथों का अधिपति बनाया।

थोड़ी और देर बाद सहदेव राजसभा के पास आया। बिल्कुल ग्वाले के वेश में, माला गले में पहने, रस्सियाँ हाथ में लिये, लंबी बाँसुरी लिये उसने सभा में प्रवेश किया। उसने राजा के सामने खड़े होकर कहा "महाराज, मैं आपकी गायों को चोरों व रोगों की पीड़ा से मुक्त करूँगा। मैं जतन करूँगा कि गायें और अधिक दूध दें। मैं अरिष्टनेमि नामक वैश्य हूँ। धर्मराज की करोड़ गायें मेरे ही अधीन थीं"। मुझे तंत्रीपाल कहकर पुकारते हैं।"

विराट ने उसका विश्वास किया और उसे अपनी गायों के रखवाले के पद पर नियुक्त किया।

यों पांचों पांडव विराट के यहाँ रहने लगे और अपने अज्ञातवास का शुभारंभ किया।
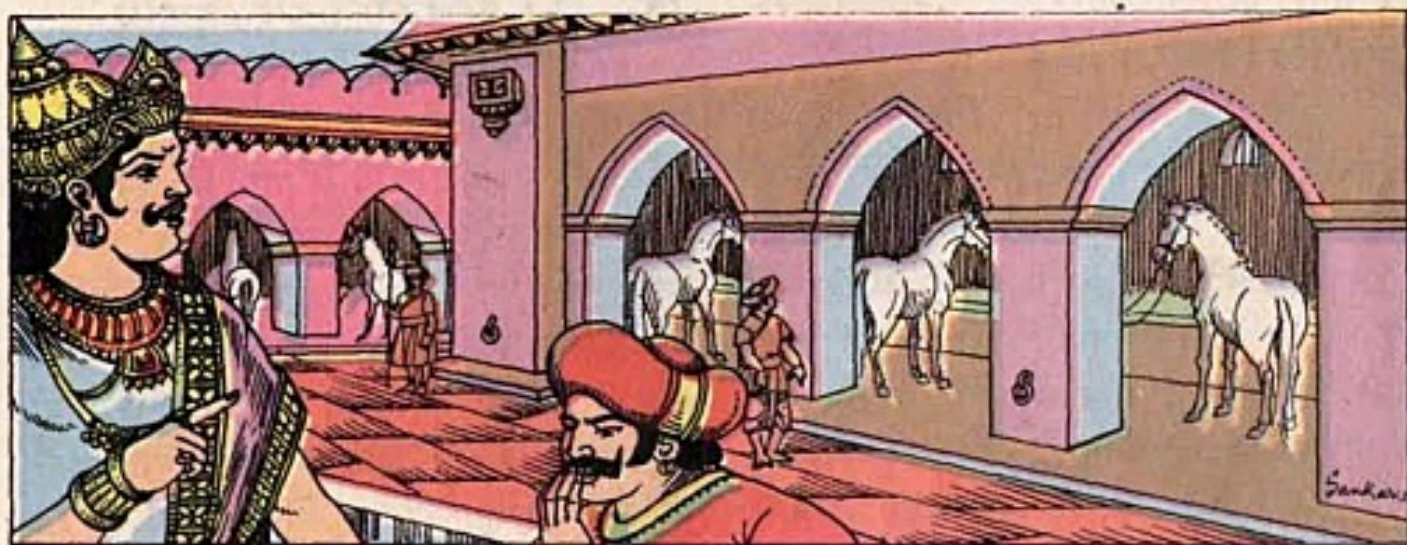
‘चन्दामामा’ की ख़बरें

भारतीय शिशुओं के लिए

जर्मनी के कुछ करुणार्द व्यक्तियों ने ‘ऐकस’ नामक संस्था की स्थापना की। ‘भारतीय शिशुओं के भविष्य के लिए’ का यह संक्षिप्त रूप है। ‘ऐकस’ गेर्हार्द नामक एक बांकर इस संस्था के अध्यक्ष हैं। श्रम-मंत्री डा. वार्चट ब्लूम इसके प्रधान पोषक हैं। लंबे अर्से से जो भारतीय इस देश में रह रहे हैं, उन्हें भी मिलाकर इस संस्था के कुल सदस्यों की संख्या है १६०। जन्म-दिन, विवाह-दिवस आदि संतोषजनक अवसरों पर सदस्य संस्था को दान देते हैं। इस प्रकार जो धन इकट्ठा होता है, उससे हमारे देश के शिशुओं की पढ़ाई के लिए सहायता पहुँचायी जाती है। विकलांग शिशुओं के लिए कृत्रिम अवयव, पहियेवाली कुर्सियाँ, पाठशालाओं के भवन-निर्माण, अस्पताल, ग्रंथालय-भवन निर्माण आदि के लिए इस धन का उपयोग किया जाता है। कभी-कभी इस संस्था के सदस्य हमारे देश में यह देखने आते हैं कि उनके दिये हुए धन का सदुपयोग हो रहा है या नहीं। करुणा की सीमाएँ नहीं होती हैं न?

भारतीय चित्रों की माँग

लंदन की सुप्रसिद्ध नीलामी संस्था ‘क्रिस्टीस’ से आयोजित नीलामी की बिक्री फिर एक और बार साबित करती है कि विदेशी कलाप्रेमियों में भारतीय चित्रों की पर्याप्त माँग है। राजा रविवर्मा द्वारा चित्रित ‘साड़ी पहनी स्त्री’ चित्र को सूचित क़ीमत से दो गुना अधिक दाम मिला है। यह चित्र ११,६०,००० रुपयों में बिका है। के.के. हेब्बर, गणेश पैन, अंजली इलमेनोन के चित्रों की भी काफ़ी माँग है। लंदन की ही एक और सुप्रसिद्ध नीलामी संस्था ‘सौतबी’ अक्तूबर में न्यूयार्क में बिक्री का प्रबंध करनेवाली है। पिछले साल छे सौ भारतीय चित्र नीलामी के मार्केट में आये हैं।

उत्तरी धृव में पहुँचनेवाली प्रथम महिला

फ्रांस की चालीस साल की महिला डा. क्रिस्टिन बानियन, सेर्गी ओगोरोडनी नामक रूसी परिदर्शक (गैड) को लेकर उत्तराग्र से उत्तर धृव की ओर मार्च, तीन तारीख़ को पैदल चल पड़ी। उनके लक्ष्य-स्थल पर पहुँचते-पहुँचते साठ दिनों से अधिक लगे। पैदल चलकर उत्तरी धृव पर पहुँचना मात्र ही क्रिस्टिन का आशय नहीं है। मार्ग-मध्य में उसने शिशुओं की चिकित्सा के लिए पर्याप्त धन भी इकट्ठा किया।

भागवत मेला

तमिलनाडु के तंजाऊर शहर से अठारह कि.मी. की दूरी पर मेलट्टूर नामक एक गाँव है। यहाँ हर साल नरसिंह जयंती के अवसर पर भागवत मेला के नाम से नृत्य-नाटिकाएँ प्रदर्शित होती हैं। इस उत्सव के दर्शक हार्दिक आनंद लूटते हैं और उनकी अनुभूति बड़ी ही विशिष्ट होती है। ये नृत्य-नाटिकाएँ गलियों में प्रदर्शित होनेवाले नाटकों के समान होती हैं। ये मेले के मुख्य आकर्षण हैं।

भागवत मेला के संबंध में विशद रूप से हमें जानना हो तो पाँच शताब्दियों के पहले के इतिहास के पन्नों को पलटना होगा। दक्षिण भारत के शासक तेलुगू नायकराजा कला-पोषक थे। उन्होंने सांस्कृतिक कार्य-कलापों को प्रोत्साहन दिया। इन नायक राजाओं ने भागवत मेला को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से पाँच सौ तेलुगू ब्राह्मणों को मेलट्टूर दान में दिया।

मेलट्टूर के वरदराजस्वामी के मंदिर के सामने के मार्ग पर नाटक-प्रदर्शन के लिए वेदी का प्रबंध किया जाता है। मंदिर के उत्सव-मूर्तियों का अलंकार होता है। उन्हें प्रवेश-द्वार पर रखा जाता है। कलाकार महसूस करते हैं कि ये नाटक देवताओं के समक्ष प्रदर्शित करने का उन्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ। वदी के पीछे वाद्यकार बैठे हुए होते हैं।

नाटकों के इतिवृत्त पुराणों से चुने जाते हैं। लंबे अर्से तक मेलट्टूर के पुरुष कलाकार ही भाग लेते थे। भागवत मेला विलक्षण एक अद्भुत नाटक प्रदर्शन है।

पुराणकाल के राजा

ब्रह्मदत्त

पांचाल राजा ब्रह्मदत्त अत्यंत करुणामय था। धर्म का पालन हर स्थिति में करता था। धर्म से हटकर कुछ भी करता ही नहीं था। उसमें समस्त प्राणियों की भाषाओं को समझने की अद्‌भुत शक्ति थी।

एक दिन सायंकाल अपनी पत्नी सहित उद्यानवन में टहल रहा था। पास ही की झाड़ियों को देखते हुए वह हँस पड़ा। रानी ने भी उसी ओर देखा, लेकिन उसे कुछ दिखायी नहीं दिया तो उसने अपने पति से पूछा "आपकी हँसी का क्या कारण है स्वामी?"

राजा ने कहा "कोई ख़ास कारण नहीं है।"

पति के उत्तर से वह तृप्त नहीं हुई। उसने पूछा "वातावरण प्रशांत है। कहीं भी किसी भी प्रकार की हलचल नहीं है। फिर भी आप हँस क्यों पड़े? बिना कारण के क्या कोई हँसता है?"

ब्रह्मदत्त सत्यनिष्ठ था। उसने अपनी हँसी का कारण बताते हुए कहा "झाड़ियों में दो चींटियाँ व्यर्थ ही एक छोटी-सी बात को लेकर आपस में झगड़ रही थीं। चूंकि मैं समस्त प्राणियों की भाषाएँ जानता हूँ, अतः उनका छोटा-सा शब्द भी मैं सुन और समझ लेता हूँ। उनके इस झगड़े को सुनकर मुझे अनायास ही हँसी आ गयी।"

फिर भी रानी को विश्वास नहीं हुआ। सोचा कि राजा मज़ाक कर रहे हैं "मैं इतनी भोली नहीं हूँ कि आपकी बातें सच मान लूँ।"

राजा ने जब बताया कि जो भी कहा, सच है तो रानी ने अब उसकी बातों का विश्वास किया और कहा "ऐसी बात है! यह अद्‌भुत शक्ति आपको कैसे प्राप्त हुई?"

तब तक राजा भी इस विषय से अपरिचित था। राजा गहरी सोच में पड़ गया कि यह अद्‌भुत शक्ति उसे कैसे प्राप्त हुई? उसने पूरा ध्यान लगाकर भगवान का स्मरण किया। दूसरे दिन जब वह राजभवन की ओर जाने लगा तब एक वृद्ध ब्राह्मण ने उसे देखकर एक श्लोक पढ़ा। उस श्लोक में ब्रह्मदल का पूर्व जन्म-वृत्तांत निक्षिप्त था।

ब्रह्मदत्त कभी एक मुनिकुमार था। अकाल के समय उससे भूख सही नहीं गयी। गुरु के पालतू पशु को मारा और उसका मांस खा लिया। इस पाप के कारण अनेकों जन्म लेकर उसे पीडाएँ सहनी पड़ीं। पुनः मुनिकुमार का जन्म पाया। उस समय एक राजा के वैभव को देखकर चकित रह गया। इस कारण इस जन्म में राजा बना। समस्त प्राणियों में अपने को देख सकने की शक्ति अपनी तपोशक्ति द्वारा पूर्व जन्म में प्राप्त की थी। इसी कारण उसे अब समस्त प्राणियों की भाषाओं का ज्ञान है।

पूर्व जन्म की स्मृतियों के कारण ब्रह्मदत्त बेहोश हो गया। थोड़ी देर बाद वह होश में आया। तदुपरांत अपना शेष जीवन भक्ति-पूजा में बिताया।

ब्रह्मदत्त की कथा हमें बताती है कि पूर्व जन्म में जो शक्तियाँ उपलब्ध होती हैं, उन्हीं के बल पर इस जन्म में हमारे शक्ति-सामर्थ्य व स्वभाव निर्भर होते हैं।

क्या तुम जानते हो?

ऐसबेर्ग

समुद्री जल में तैरनेवाली हिम की बृहदाकार चट्टान को 'ऐसबेर्ग' कहते हैं। ये धृवों के हिम पर्वतों से टुकड़ों में पृथक हो जाती हैं और जल में तैरती रहती हैं। सबसे बड़ी हिम चिट्टान संसार के दक्षिणाग्र में दिखायी देती है। लगभग ६० मीलों की लंबाई २० मीलों की चौड़ाई, ३५० फुटों की ऊँचाईवाली ये चट्टानें अंटारिकेटिक हिम पर्वतों से अलग हो जाती हैं। ऐसी हिम चट्टानों पर तात्कालिक वातावरण अनुसंधान केंद्र खड़े किये जाते हैं। अनुसंधानी हवाई जहाज़ों को उतारने के लिए आवश्यक स्थलों का प्रबंध किया जाता है। उत्तराग्र की हिमचट्टानें साधारणतया छोटी होती हैं। वे ज़्यादातर ग्रीनलांड से लेकर उत्तरी अटलांटिक की दक्षिणी ओर तैरती जाती हैं।

इंद्रधनुष

सहायक भाषा

लूई ब्रेयिल नामक पंद्रह साल के एक विद्यार्थी ने अंधों के जीवन में कायापलट ला दिया। उसी ने 'ब्रेयिल' भाषा खोज निकाली। इसके द्वारा अंधे लिखना-पढ़ना सीख सकते हैं। उभरे तारों की तरह की रेखाओं को अपनी उँगलियों की नोक से स्पर्श करते हुए अंधे आसानी से पढ़ सकते हैं। छे 'की' वाली मशीन से टाइपेरैटर की तरह दिखायी देनेवाले 'ब्रेयिलरैटर' से ब्रेयिल लिपि का आयोजन करते हैं।
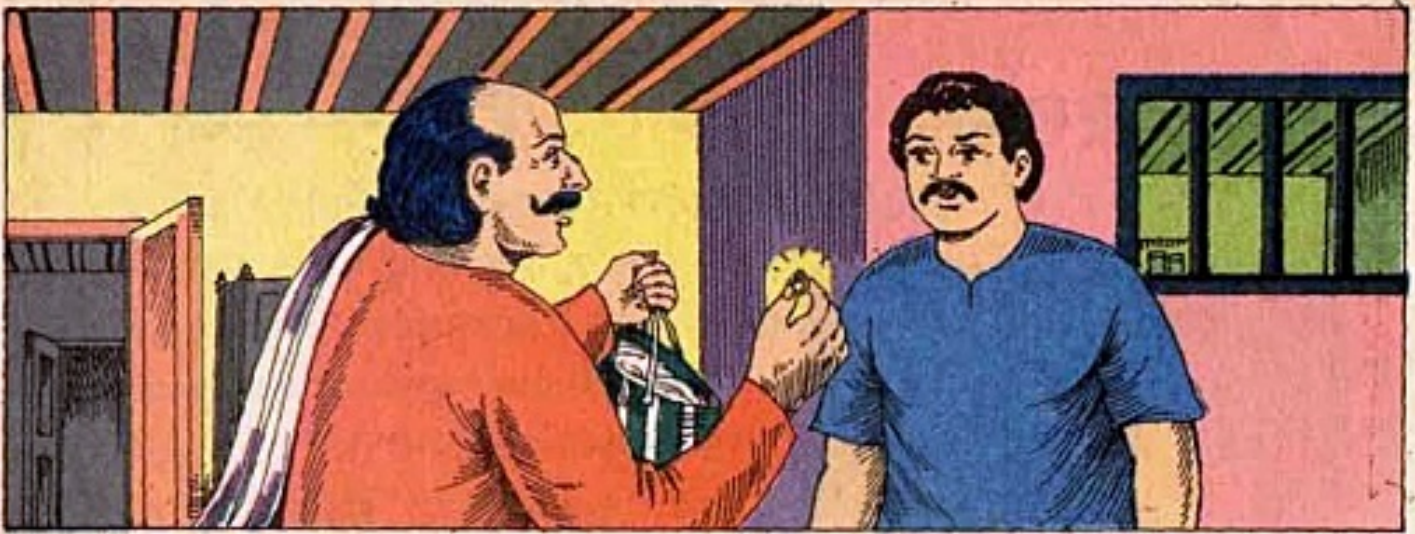
महा कंजूस

एक गाँव में रविचंद्र नामक एक भाग्यवान रहता था। मरते समय उंसने अपने दोनों बेटे हरि और गिरि को जायदाद समान रूप से बाँटकर दी।

बिना काम किये बैठे-बैठे खाओ, तब भी कुछ फ़रक़ नहीं पडेगा, क्योंकि जायदाद बेशुमार थी। हरि मज़े से दिन काट रहा था। वैभवपूर्वक जीवन बिता रहा था। जो दिल में आया, कर रहा था। उसका अपना बड़ा महल था। दास-दासियाँ थीं। हर दिन उसके घर में कोई न कोई जलसा मनाया जाता था। सब उसकी तारीफ़ के पुल बाँधते थे। उसे बड़ा आदमी मानते थे। हरि भी उससे जितना हो सके, लोगों की मदद करता था। सच कहा जाए तो दूसरों की मदद करने के लिए बहाने ढूँढ़ता था। सारे ग्रामीण उसके दान-धर्म के बारे में बातें करते रहते थे।

किन्तु गिरि छोटे-से एक खपरैल के घर में रहता था। पत्नी कल्पना के विचार भी उसके विचारों से मिलते-जुलते थे, इसलिए उसका जीवन सुखपूर्वक कट रहा था। उनका घर सदा साफ़ रहता था। उनके घर में क़ीमती चीज़ें नहीं थीं। वे अच्छे कपड़े ही पहनते थे, पर हाँ, वे चमकीले नहीं होते थे। गिरि भी दूसरों की मदद करता था। परंतु मदद पहुँचाने के पहले वह कारण जानना चाहता था। उनसे प्रश्न-पूछता और उनसे प्राप्त उत्तरों से संतृप्त होने के बाद ही उनकी सहायता करता था। सारा गाँव उसे महा कंजूस कहता और मानता था।

वहाँ से थोड़ी दूरी पर एक और गाँव में अचलपति नामक एक व्यक्ति था। वह साधारण परिवार का था। प्रदीप उसके बेटे का नाम था। जया उसकी बेटी थी। जया विवाह के योग्य हो गयी। अचलपति विवाह के लिए आवश्यक धन जुटा रहा था।

कामेश

एक दिन पड़ोसी धनवान ने यात्रा पर जाते हुए अचलपति को एक अंगूठी देते हुए कहा "शेष सभी मूल्यवान वस्तुओं को एक गुप्त स्थल में सुरक्षित रखा है। यह उँगली में ही रह गयी, इसलिए भूल गया। इस यात्रा में चोरों का डर है। यह अंगूठी केवल मूल्यवान ही नहीं बल्कि मेरे लिए बहुत ही विशिष्ट भी है। पीढ़ियों से हमारे पुरखे इसे अपने पुत्रों को देते आ रहे हैं। यह विरासत है।" कहकर वह चला गया।

अचलपति ने उस अंगूठी को गहनों के उसी संदूक में सुरक्षित रखा, जिसमें बेटी के लिए बनवाये गये गहने थे। उसने यह बात अपनी पत्नी से नहीं बतायी।

दूसरे ही दिन जया को देखने वर सहित लोग आये। उन्हें लड़की अच्छी लगी। लेन-देन की भी बात हो गयी। सास ने वधु के गहनों को देखना चाहा तो जया की माँ उसें कमरे में ले गयी। जया के गहने देखकर जया की सास बेहद खुश हुई। विशेषकर उस अँगूठी पर वह रीझ गयी और कहा "यह अंगूठी मुझे बहुत अच्छी लगी। हमारा रिश्ता पक्का हो गया, इसलिए इस शुभ संदर्भ की स्मृति में यह अंगूठी मुझे दे दो। अगर तुमने यह अंगूठी मुझे अभी दे दी तो समझना, विवाह हो ही गया।"

उस अंगूठी को देखकर जया की माँ आश्चर्य में डूब गयी। उसके पति ने उससे कभी भी इस अंगूठी के बारे में कुछ नहीं कहा। उसे मालूम नहीं था कि यह अंगूठी कब बनवायी गयी। इसलिए उसने उसे समधिन को देने के पहले पति से अनुमति

लेनी चाही। जया की सास ने कहा "मेरे पति को मालूम हो जाए कि मैंने यह अंगूठी माँगकर ली तो वे मुझपर नाराज़ होंगे। यह छोटी-सी बात अपने पतियों को क्यों मालूम हो?"

उसकी बातें सुनने के बाद जया की माँ को भी लगा कि यह बात सचमुच नगण्य है। उसने होनेवाली समधिन की उँगली में अंगूठी पहना दी। बाद पुरोहित बुलाया गया और विवाह के मुहूर्त का दिन व समय भी निश्चित हुआ। फिर वे चले गये। जया की माँ ने भी सोचा कि पति अंगूठी के बारे में पूछे तो तब बता दूँगी।

घरवाले सब इस बात पर बहुत खुश थे कि जया की शादी पक्की हो गयी। एक हफ़्ते के बाद पड़ोसी धनी यात्रा से लौटा और अचलपति से अंगूठी माँगी। गहनों के संदूक

मिल जाए। इसके लिए मैं तुम्हें दो हफ़्तों की अवधि दे रहा हूँ।''

''आपने जो कहा, सही है। आपकी भावनाओं का मैं आदर करता हूँ। बताना कि क्या ऐसी अंगूठी कहीं और है? सुनारों से कहकर ऐसी ही अंगूठी बनवायेंगे।'' अचलपति ने कहा। धनवान ने हँसते हुए कहा ''जानते हो, इस अंगूठी की क्या क़ीमत है? दो हज़ार अशर्फ़ियों की है। दूसरी अंगूठी बनवाना तुम्हारे बस की बात नहीं।''

अचलपति के पास बेटी की शादी के लिए इकट्ठी की गयीं पाँच हज़ार अशर्फ़ियाँ थीं। अगर यह अंगूठी बनवायी जाए तो दो हज़ार अशर्फ़ियों की कमी पड़ जायेगी। उसने सोचा, जो भी हो, अपनी इज़्ज़त क़ायम रखनी हो, अपने चरित्र को कलंकित न करना हो, जग हँसाई से बचना हो तो उसी किसी भी हालत में ऐसी अंगूठी बनवानी ही होगी। इसलिए अचलपति ने धनी से बारंबार कहा कि ऐसी ही एक अंगूठी दिखायी जाए तो यह काम हो सकता है।

धनी ने थोड़ी देर रुककर कहा ''हमारे दादा की उँगलियों में एक ही प्रकार की चार अंगूठियाँ होती थीं। उनके दो पुत्र थे। दोनों को दो-दो अंगूठियाँ दीं। मेरे भी पिता के दो बेटे हैं। मेरे पिता ने भी एक अंगूठी मुझे दी और दूसरी मेरे भाई को। व्यापार करने मेरा भाई मलय द्वीप चला गया। उसका पता लगाना असंभव है। अब रहे मेरे चाचाजी। उनके भी मरे बहुत समय हो गया। उनके बेटे हरि, गिरि दोनों एक ही गाँव में रह रहे हैं। उनके बारे में जो ब्योरा चाहिए, तुम्हें

में उसने ढूँढ़ा तो अंगूठी दिखायी नहीं पड़ी। वह घबरा गया और पत्नी से पूछा तो उसने असली बात बता दी।

अचलपति को लगा, मानों उसका सिर काट दिया गया हो; उसकी पगड़ी उतार दी गयी हो। वह अपने आपको कोसता रहा कि मैंने क्यों यह बात अपनी पत्नी से छिपायी। वह भला इस स्थिति में कर क्या सकता था। जो हुआ, सब कुछ उसने धनवान को बताया और उससे पूछा कि आप ही बताइये, अब मैं क्या करूँ।

धनवान ने थोड़ी देर तक सोचने के बाद कहा ''मैं तुम्हारी ईमानदारी बखूबी जानता हूँ। पर इसका यह मतलब नहीं कि मैं पीढ़ियों की इस विरासत को भुला दूँ। कोई ऐसा उपाय सोचो, जिससे वह अंगूठी फिर से मुझे

दूँगा। कहा जाता है कि हरि दानी है और गिरि कंजूस है।'' उसने अचलपति को उन दोनों भाइयों के बारे में विवरण दिये।

अचलपति ने अपने बेटे प्रदीप को पूरा विषय बताया और कहा ''बेटे, किसी भी तरह उस अंगूठी की नक़ल प्राप्त करो। यह हमारे परिवार के सम्मान व प्रतिष्ठा की बात है।''

प्रदीप पिता की अनुमति लेकर फ़ौरन हरि, गिरि के गाँव गया। पहले वह हरि से मिला और कहा ''मैं आपकी सहायता पाने आया हूँ। मेरी कहानी सुनिये।''

उस समय हरि के घर में कोई जलसा मनाया जा रहा था। इस कारण वह व्यस्त था, इसलिए उसने कहा ''मेरे पास इतना समय नहीं कि मैं तुम्हारी कहानी सुनूँ। कहो, तुम्हें क्या चाहिये? मैं भरसक तुम्हारी मदद करूँगा।''

''मुझे आपकी अंगूठी की नक़ल चाहिये'' प्रदीप ने कहा।

यह सुनकर हरि अपने को और व्यस्त बताता हुआ बोला ''वह अंगूठी अब मेरे पूजा-मंदिर में है। उसकी नक़ल उतरवाना अब संभव नहीं। पास ही की गली में मेरा भाई गिरि रहता है। उसके पास भी ठीक इसी तरह की एक अंगूठी है। किन्तु वह महा कंजूस है। उसकी नक़ल उतरवाने के लिए एक अशर्फ़ी भी खर्च करने तैयार नहीं होगा। मैं तुम्हें दस अशर्फ़ियाँ दूँगा। उसकी नक़ल उतरवाने तथा आवश्यक ख़र्च के लिए भी इतना धन काफ़ी होगा।'' प्रदीप कुछ कहना चाहता था, लेकिन उसने उसकी बातें सुनने से इनकार कर दिया और ज़बरदस्ती दस अशर्फ़ियाँ उसके हाथ में थमा दीं और चलता बना। वहाँ उपस्थित लोगों ने हरि के दान-गुण की वाहवाही की।
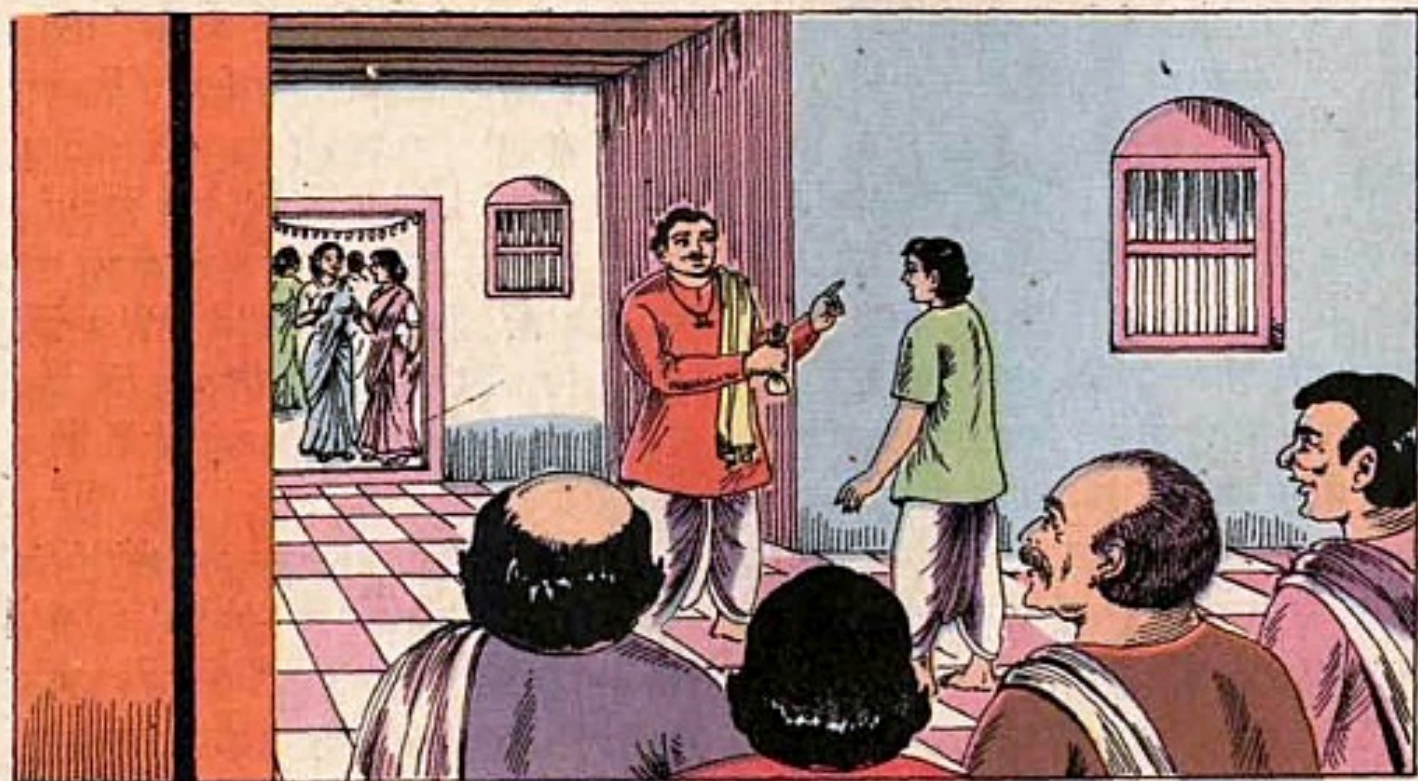
प्रदीप दस अशर्फ़ियों को लेते हुए लज्जित हुआ, पर वह कुछ कह नहीं पाया। वह नहीं चाहता था कि कंजूस के नाम से बदनाम गिरि के घर जाऊँ। परंतु ज़रूरत ही ऐसी थी कि उसे जाना ही पड़ा।

अपने घर आये प्रदीप का आह्वान किया गिरि ने। उससे मीठी बातें कीं और ठंडी शरबत पिलायी। गिरि ने प्रदीप की बातें बड़े ही ध्यान से सुनीं। उससे कुछ सवाल किये और संपूर्ण विषय जान गया।

बाद उसने प्रदीप से कहा "तुम्हारा काम बड़ा ही नाजुक है। बड़ी सावधानी से व्यवहार करना होगा। मेरी उँगली की यह अंगूठी परंपरा से चली आती हुई मेरे वंश की विरासत है। मेरी दृष्टि में यह अमूल्यवान है। अतः मैं तुम्हें यह नहीं दे सकता। ठीक इसी प्रमाण की अंगूठी बनाने की क्षमता वज्रपुरी के रत्नगुप्त में ही है। वह अब करोड़पति है। इतने छोटे-छोटे काम करने पर वह आमादा नहीं होगा। फिर भी उसे समझा-बुझाकर, बहलाकर उसे मनाने स्वयं मैं भी तुम्हारे साथ वज्रपुरी आऊँगा। वहाँ नक़ली क्यों, असली अंगूठी ही बनवायेगें।"

"महोदय, मेरे पास इतना धन नहीं है। मुझे अपना गाँव जाना होगा और आवश्यक धन ले आना होगा" प्रदीप ने कहा।

उसका उत्तर सुनने के बाद क्षण भर ठहरकर गिरि ने कहा "अपनी बेटी की शादी के लिए जो धन इकट्ठा किया गया, उसी से ही तो तुम्हारे पिता दे सकेंगे। इस अंगूठी के कारण विवाह रुक जाए तो किया-कराया सब व्यर्थ हो जायेगा। शादी करानी ही हो तो तुम्हारे पिता को कहीं से कर्ज़ लेना पड़ेगा। वह कर्ज़ मैं खुद दूँगा। तुम्हें स्वीकार हैं?"

गिरि की अच्छाई पर प्रदीप चकित रह गया। बाद दोनों मिलकर वज्रपुरी गये। यात्रा में पच्चीस अशर्फ़ियाँ ख़र्च हुई। वज्रपुरी में भोजनालय चलानेवाली एक बूढ़ी दादी के यहाँ वे ठहरे। गिरि ने ही पूरा ख़र्च उठाया। दो ही दिनों में रत्नगुप्त से अपनी अंगूठी की ही तरह की अंगूठी बनवाने में गिरि सफल हुआ। साथ ही रत्नगुप्त से सौदा करके एक सौ पचास अशर्फ़ियाँ कम कराने में भी गिरि कामयाब हुआ।

वहाँ का काम पूरा करने के बाद गिरि और प्रदीप अचलपति के समधी के गाँव गये। वहाँ पहुँचने के बाद गिरि अचलपति के समधी से मिला और कहा "महाशय,

समधिन मना करती रही, पर अचलपति की पत्नी ने ज़बरदस्ती आपकी पत्नी की उँगली में अंगूठी पहना दी। उस समय उसे मालूम नहीं था कि वह अंगूठी अपनी नहीं है। उसपर किसी और दूसरे का नाम भी है। अक्षर छोटे-छोटे हैं, इसलिए उसपर जडवाये गये अक्षर साफ़-साफ़ दिखायी नहीं देते। अपनी पत्नी के किये काम पर अचलपति बहुत ही लज्जित हुए। उन्होंने उसी तरह की एक और अंगूठी बनवायी और उसपर समधिन का नाम भी जडवाया। उन्होंने मुझे वह अंगूठी देकर भेजा। आप बुरा न समझें तो इसे स्वीकार कीजिये।''

अचलपति का समधी गिरि की उक्त बातों पर बहुत ही खुश हुआ और वह अंगूठी अपनी पत्नी को दी। पुरानी अंगूठी उसे देते हुए कहा ''अचलपति जैसे गौरवनीय व्यक्ति बिरले ही होते हैं। उनसे बताइयेगा कि हम सब घरवाले उनके व्यवहार से बहुत ही संतुष्ट हैं।''

गिरि, प्रदीप दोनों वहाँ से अचलपति के गाँव गये। प्रदीप ने अपने पिता को जो हुआ, सब कुछ बताया और अंगूठी उसे दी।

अचलपति ने गिरि के दोनों हाथ पकड़ते हुए कहा ''आपने बहुत ही अच्छी तरह यह कार्य संभाला और सफल हुए। दूसरों के मन को ठेस पहुँचाये बिना, हमारे परिवार की इज्ज़त को बनाये रखते हुए आपने अपनी व्यवहार-दक्षता दर्शायी। ठीक समय पर कर्ज़ देकर हमारी मदद की। आपका कर्ज़ ब्याज-सहित चुकाऊँगा। फिर भी जीवन-पर्यंत मैं आपका ऋणी हूँ। मेरी समझ में नहीं आता

कि अपनी कृतज्ञता किस प्रकार व्यक्त करूँ।''

गिरि ने, अचलपति से अपने हाथों को धीरे से छुड़ाते हुए कहा ''महाशय, यह हर मनुष्य का धर्म है कि वह दूसरे की भरसक सहायता करे। भगवान की दया से मेरे पास सब कुछ है। मेरे कर्ज़ के बारे में चिंतित मत होइये। जब आप चुका पायेंगे, चुका सकते हैं। अगर आपसे न भी हो सका तो कोई बात नहीं। कभी भी अपने को कर्ज़दार समझकर दुखी न होइये।''

तब प्रदीप ने आश्चर्य-भरे स्वर में कहा ''सब का कहना है कि आप महा कंजूस हैं। अपने भाई के ही समान की संपत्ति है आपके पास। किन्तु वे वैभवपूर्वक जीवन बिता रहे हैं और आप। आप तो सादा जीवन बिता रहे हैं। ज़रूरतमंद की हर हालत में आप

मदद करते हैं। उनके लिए मुसीबतें मोलने आप सदा तैयार हैं, उनके लिए जितना भी खर्च हो, करते हैं। फिर भी आपके दान-गुण की प्रशंसा नहीं होती, आपका आदर नहीं होता। कारण मेरी समझ में नहीं आ रहा है।''

गिरि ने हँसकर कहा ''बेटे, जो मदद चाहते हैं, उनसे बिना कोई प्रश्न किये, वास्तविक विषय जाने बिना उनकी मदद की जाए तो मददगार को दानकर्ण कहकर प्रशंसा की जाती है। ऐसे दानकर्णों की वजह से भिखमंगों की संख्या बढ़ती है। अलावा इसके दूसरा और कोई प्रयोजन नहीं होता। दूसरे की आवश्यकता जानें, महसूस करें और उनकी समुचित सहायता करें, उसी में संतृप्ति है। ऐसी संतृप्ति नाम व प्रसिद्धि पाने के पीछे नहीं दौड़ती। वह उस ओर ध्यान ही नहीं देती। अब रहा मेरा जीवन। मेरे पिता ने मुझे जो संपत्ति दी, उसे अपनी संतान को सौंपना मेरा कर्तव्य है। मैंने स्वयं परिश्रम करके जो कमाया, उससे अपना जीवन बिताता हूँ। अपनी ही कमाई में से मैं दूसरों की मदद करता हूँ। अगर कमाई का धन पर्याप्त नहीं हुआ तो अपने पिता की संपत्ति से लेता हूँ और मदद करता हूँ। दूसरों ने मुझसे जो कर्ज़ लिया, उसे वापस दिया तो ठीक है। नहीं तो मैं बड़ी किफ़ायत बरतता हूँ और पैसे बचाकर पूरी रक़म उसी संपत्ति से जोड़ देता हूँ। आज तक मैंने दूसरों को जितना भी कर्ज़ दिया, उसमें से बहुत-सा हिस्सा वापस नहीं मिला। इसलिए मुझे ही यह रक़म भरनी पड़ी, भर रहा हूँ। सादा जीवन बिताने के पीछे यह भी एक कारण है। इसी वजह से लोग मुझे कंजूस समझते हैं।''

अचलपति ने ख़बर भेजी तो गिरि को उसके गाँव पहुँचाने बैल-गाड़ी आयी। गिरि ने बैल-गाड़ी में जाने से इनकार करते हुए कहा ''अपने सफ़र का व्यय आपको देने नहीं दूँगा। कुछ समय तक मुझे किफ़ायतमंदी से रहना है, इसलिए पैदल ही गाँव चला जाऊँगा।'' कहकर उसने बिदा ली।

अब प्रदीप की समझ में आ गया कि गिरि से जिन्होंने मदद पायी, वे ही कंजूस हैं, गिरि कदापि कंजूस नहीं। उसने भी तोल-तोलकर पैसे खर्च करने की आदत डाल ली। साल के पूरे होते-होते गिरि का कर्ज़ चुकाने में पिता की सहायता की।
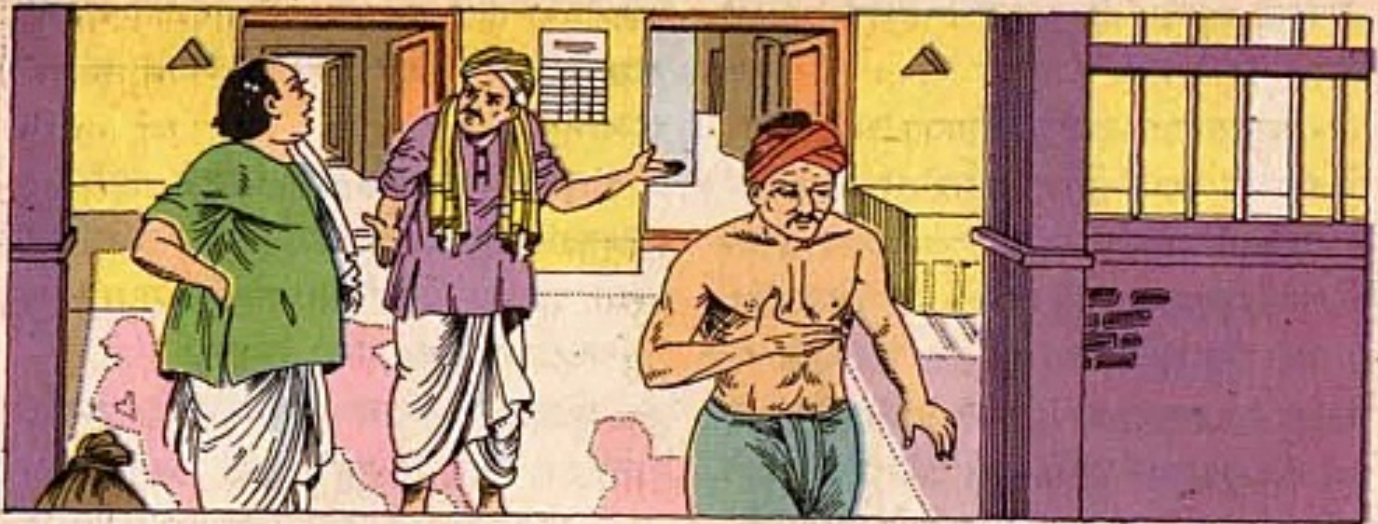
अधर्म सराय

एक बार रंगापुर के सब प्रमुख इकट्ठे हुए। उन्होंने निर्णय लिया कि मुसाफ़िरों की सहूलियतों के लिए गाँव से दूर मुख्य मार्ग के किनारे धर्म-सराय का निर्माण हो। रसोई बनाने के लिए एक बूढ़ी की नियुक्ति हो। गुमाश्ता भी हो, जो हिसाब संभालेगा। और छुट्टे काम करने के लिए एक नौकर भी रखा जाए। मंदिर की उपजाऊ भूमियों से जो कमाई होती है, उससे सराय चलायी जाए। यों उन्होंने सराय चलाने के लिए आवश्यक प्रबंध किये।

कुछ समय तक सराय का निर्वहण सक्रम रूप से ही हुआ। गाँव से दूर उस सराय में यात्री व मुसाफ़िर ही आकर रहते थे। गाँव का कोई भी वहाँ आता नहीं था। साधारण मुसाफ़िर भोजन करते, वहीं रात को रहते और सबेरे-सबेरे चले जाते थे। जो छोटे-मोटे धनी मुसाफ़िर आते थे, वे सराय के तीनों कर्मचारियों को थोडा-बहुत रक़म दे जाते थे।

उन तीनों को मुसाफ़िरों से पैसे लेने की आदत पड़ गयी। वे अब सभी मुसाफ़िरों से पैसे वसूल करने लगे। जो नहीं देते, उन्हें सराय में क़दम रखने नहीं देते थे। जैसे ही मुसाफ़िर अंदर प्रवेश करते थे, नौकर उनसे अपना मामूल वसूल कर लेता था। पैसे देने पर ही सोने की जगह दिखाता था। धर्म-सराय होटल बन गया। तीनों इस विषय में सतर्क रहते थे कि यह राज़ गाँव के लोगों को मालूम न हो।

ऐसी धांधली जब हो रही थी, तब एक युवक आर्यापुर जाते-जाते अंधेरा छा जाने के कारण रंगापुर के सराय में आश्रय पाने आया। चूँकि उसके पास पैसे नहीं थे, इसलिए वह सराय के अंदर आने नहीं दिया गया। उसे प्रवेश नहीं मिला।

वह बेचारा भूखा ही रहा। किसी एक पेड़ के नीचे सो गया और दूसरे दिन आर्यापुर

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

पहुँचा। उसने अपना कड़ुवा अनुभव अपने दोस्तों को बताया।

रामावतार भी उन आदमियों में से एक था, जिसने उस युवक की आपबीती सुनी। सराय के कर्मचारियों को सबक़ दिखाने का उसने निश्चय किया। एक नौकर को साथ लिया और रात को रंगापूर के सराय के पास पहुँचा। वह भोजन का समय था। उसने अपने नौकर से कहा "अरे, तुम गाँव में जाओ और उनसे कहो कि रंगापूर के राजा के साले सराय में ठहरे हैं।" कहकर उसे भेज दिया और स्वयं सराय में पहुँचा। जैसे ही वह सराय में आया, नौकर मंगू ने पैसे माँगे। कहा "पैसे दीजिये। नहा-धोने का इंतज़ाम करता हूँ।"

रामावतार ने बहरा होने का नाटक किया और कहा "हाँ, मैं अकेले ही आया हूँ।" कहकर उसने सराय में प्रवेश किया।

भोजनालय-कक्ष में बूढ़ी रसोइन पत्ते बिछाकर परोस रही थी। उसने रामावतार से कहा "पैसे दीजिये। आपको भी भोजन परोसूँगी।"

"मुझे किसी पदार्थ से परहेज़ नहीं है। सब खाता हूँ।" कहकर वह तुरंत भोजन परोसे गये एक पत्ते के सामने बैठ गया।

"देखोजी, वह पत्ता तुम्हारा नहीं है" बूढ़ी चिल्ला पड़ी। रामावतार ने नाटक किया, मानों उसे कुछ भी सुनाई नहीं पड़ा।

"बैठने दो बूढ़ी। वह बहरा है। एक और पत्ता उस कोने में डाल दो।" एक मुसाफ़िर ने कहा, जो खाना खाने जा रहा था। वहाँ उपस्थित सभी मुसाफ़िरों ने मुक्तकंठ से कहा "खाने जो बैठा है, उसे वहाँ से उठा देना महापाप है।" असहाय होकर बूढ़ी को खाना परोसना ही पड़ा।

रामावतार ने भरपेट खाना खाया और गुमाश्ते को देखते ही कहा "मेरे लिए बिस्तर

बिछा दो।''

गुमाश्ते ने ज़ोर से चिल्लाया ''पैसे देने होंगे।''

रामावतार ने फिर से बहरे होने का नाटक करते हुए कहा ''मुलायम कपास का बिछौना बिछाना।''

गुमाश्ता बाहर आया और नौकर से कहा ''अरे मंगू, उस बहरे को बाहर निकाल। वह समझता है कि यह सराय उसकी बपौती है।''

नौकर और गुमाश्ता दोनों वहाँ आये। उन्होंने देखा कि रामावतार किसी दूसरे के बिस्तर पर आराम से लेटा हुआ है। खर्राटे ले रहा है और नाटक कर रहा है, मानों गाढ़ी नींद में हो।

नौकर ने रामावतार को हिला-हिलाकर जगाया। उसने आँखें खोलकर पूछा कि बात क्या है? गुमाश्ते ने चिल्लाकर कहा ''चले जाओ यहाँ से।''

''यह बिस्तर बहुत ही मुलायम है। इसी पर सोऊँगा।'' रामावतार ने कहा। गुमाश्ते ने नौकर से गरजते हुए कहा ''देखते क्या हो? इसे बाहर खींचो।'' नौकर रामावतार को खींचते हुए बाहर ले जाने की कोशिश में लग गया।

इतने में गाँव के चार प्रमुख व्यक्ति वहाँ आ धमके। पूछा ''ख़बर मिली है कि राजा साहब के साले यहाँ हैं। कहाँ हैं वे?''

रामावतार ने उनसे कहा ''राजा साहब के साले की बात छोड़िये। मैंने पैसे नहीं दिये, इसलिए ये लोग मुझे इस आधी रात को यहाँ से जबरदस्ती निकाल रहे हैं।'' फिर उसने जो हुआ, सब कुछ गाँव के प्रमुखों को बताया।

सारा किस्सा सुनकर गाँव के प्रमुख हक्के बक्के रह गये। बाक़ी मुसाफ़िरों से पूछा तो उन्होंने सविस्तार बताया कि किस-किसको कितने पैसे दिये गये।

पंचायत बुलायी गयी। साबित हुआ कि तीनों ने मुसाफ़िरों से बहुत-सा धन लूटा।

गाँव-प्रमुखों ने तीनों से जुर्माना भरने को कहा और उन्हें नौकरी से निकाल दिया। उनकी जगह पर नये लोगों की नियुक्ति हुई। तब से वे कभी-कभी एक-एक करके आते और सराय की स्थिति-गतियों का मुआयना करते। अब सराय उनके पर्यवेक्षण में सुव्यवस्थित रूप से चलने लगी।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता : : पुरस्कार रु. १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, अक्तूबर, १९९७ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।
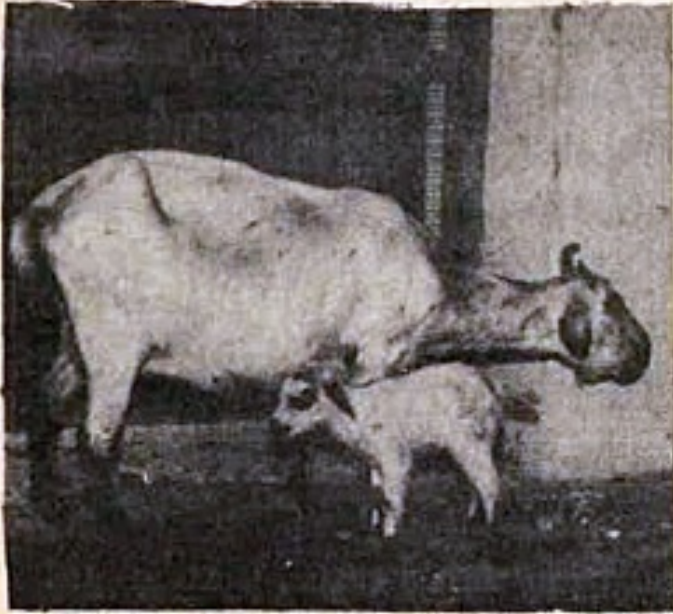
S. G. SESHAGIRI

S. G. SESHAGIRI

* उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। * '२५ अगस्त, ९७ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। * अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। * दोनों परिचियोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास - २६.

जून, १९९७ की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : भूख लगे तो फल खाओ

दूसरा फोटो : मिले समय तो चित्र बनाओ

प्रेषक : मुकेश कुमार मोर

हरसाना कलां - (मानचा) जिला - सोनीपत, हरियाना, १३१ ००१

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., Chandamama Buildings, Chennai - 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, 188, N.S.K. Salai, Vadapalani, Chennai - 600 026 (India) Editor : NAGI REDDI.

FREE
MY SECRET DIARY
Uncle Chipps
Uncle Chipps

Secret Diary with every 45 gms pack of Uncle Chipps.
Packs also available without the offer. Offer open till stocks last.

CHANDAMAMA (Hindi) August 1997 Regd. No. M. 5452/97